ISSN : 0976-0024

जुलाई-सितंबर 2022

वर्ष 28, अंक : 112

PEER REVIEWED REFREED JOURNAL

महिला
Mahila

# विधि भारती
# Vidhi Bharati

विधि चेतना की द्विभाषिक (हिन्दी-अंग्रेजी) शोध पत्रिका

Research (Hindi-English) Quarterly Law Journal

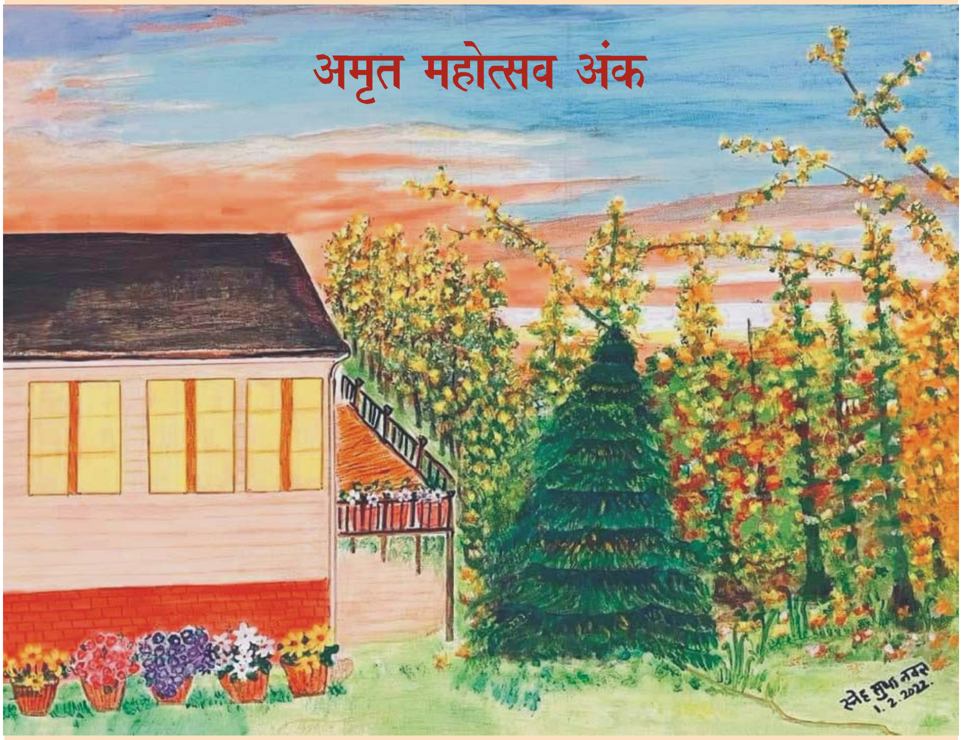


Editor-in-Chief : Santosh Khanna

# विधि भारती परिषद का भव्य सम्मान एवं पुस्तक लोकार्पण समारोह
## 23 जुलाई, 2022, हिंदी भवन, नई दिल्ली

मंचासीन अतिथिगण न्यायमूर्ति श्री शंभूनाथ श्रीवास्तव, श्रीमती सत्या बहिन, श्री तिलकराज टककर, श्रीमती सपना शुक्ल एवं श्रीमती सन्तोष खन्ना।

मंचासीन अतिथियों द्वारा दीप प्रज्ज्वलन

सरस्वती वंदना श्रीमती सपना दत्ता सक्सेना सुहासनी

सभागार में अतिथिगण

जुलाई-सितंबर वर्ष 28, अंक : 112 2022
July-September
ISSN : 0976-0024
अमृत महोत्सव अंक

महिला
Mahila

# विधि भारती
# Vidhi Bharati

विधि चेतना की द्विभाषिक (हिंदी-अंग्रेजी) शोध पत्रिका
**Research (Hindi-English) Quarterly Law Journal**

(केंद्रीय हिंदी निदेशालय, शिक्षा मंत्रालय के आंशिक अनुदान से प्रकाशित)

ISSN 0976-0024
9 770976 002001

प्रधान संपादक
**सन्तोष खन्ना**
संपादक
**डॉ. उषा देव**

**PEER REVIEWED REFREED JOURNAL**

पत्रिका में व्यक्त विचारों से सम्पादक/परिषद् की सहमति आवश्यक नहीं है।
Indexed at Indian Documentation Service, Gurugram, India
Citation No. MVB-28/2022

**विधि भारती परिषद्**
बी.एच./48 (पूर्वी) शालीमार बाग, दिल्ली-110088 (भारत)
**मोबाइल** : 09899651872, 09899651272
**फ़ोन** : 011-45579335
**E-mail :** vidhibharatiparishad@hotmail.com, santoshkhanna25@gmail.com
**Website :** www.vidhibharatiparishad.in

**PEER REVIEWED REFREED JOURNAL**

**'महिला विधि भारती' पत्रिका** (पूर्व यू.जी.सी. की सूची में भी शामिल, क्र. 156, पत्रिका संख्या 48462)

विधि चेतना की द्विभाषिक (हिंदी-अंग्रेज़ी) विधि-शोध त्रैमासिक पत्रिका

**E-mail :** vidhibharatiparishad@hotmail.com

**Website :** www.vidhibharatiparishad.in

**वर्ष 28, अंक :** 112, (जुलाई-सितंबर, 2022)

**प्रधान संपादक :** सन्तोष खन्ना, **संपादक :** डॉ. उषा देव

**आवरण :** स्नेह सुधा नवल

**बोर्ड ऑफ रेफरीज़ एवं परामर्श मंडल**

1. डॉ. के.पी.एस. महलवार : चेयर प्रो., प्रोफेशनल एथिक्स, नेशनल लॉ यूनिवर्सिटी, न.दि.
2. डॉ. चंदन बाला : डीन एवं विभागाध्यक्ष, विधि विभाग, जयनारायण व्यास वि.वि., जोधपुर
3. डॉ. राकेश कुमार सिंह : पूर्व डीन एवं विभागाध्यक्ष, फैकल्टी ऑफ लॉ, लखनऊ विश्वविद्यालय
4. डॉ. किरण गुप्ता : पूर्व विभागाध्यक्ष, फैकल्टी ऑफ लॉ, दिल्ली विश्वविद्यालय
5. प्रो. (डॉ.) सिद्धनाथ सिंह : पूर्व डीन एवं विभागाध्यक्ष, विधि विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय
6. प्रो. (डॉ.) गुरजीत सिंह : संस्थापक वाइस चांसलर, नेशनल लॉ यूनिवर्सिटी एवं न्यायिक अकादमी, असम

**परिषद् की कार्यकारिणी, संरक्षक : डॉ. राजीव खन्ना**

1. डॉ. सुभाष कश्यप (अध्यक्ष)
2. न्यायमूर्ति श्री लोकेश्वर प्रसाद (उपाध्यक्ष)
3. श्रीमती सन्तोष खन्ना (महासचिव)
4. रेनू (कोषाध्यक्ष)
5. श्री अनिल गोयल (सचिव, प्रचार)
6. डॉ. प्रेमलता (सदस्य)
7. डॉ. आशु खन्ना (सदस्य)
8. डॉ. पूरनचंद टंडन (सदस्य)
9. डॉ. उषा टंडन (सदस्य)
10. डॉ. सूरत सिंह (सदस्य)
11. डॉ. के.एस. भाटी (सदस्य)
12. डॉ. शकुंतला कालरा (सदस्य)
13. डॉ. उमाकांत खुबालकर (सदस्य)
14. अनुरागेंद्र निगम (सदस्य)

**शुल्क दर**

वार्षिक शुल्क 500/-- रुपए — संस्थागत वार्षिक शुल्क 500/-- रुपए

आजीवन शुल्क 5,000/-- रुपए — संस्थागत आजीवन शुल्क 20,000/-- रुपए

**डाक शुल्क अलग**

# अंक 112 में


1. **संपादकीय** -- 207

2. संसदीय समितियाँ / **सतीश चंद्र रस्तौगी** -- 211

3. वैवाहिक बलात्कार और महिलाओं के अधिकार / **सन्तोष खन्ना** -- 219

4. अमृत महोत्सव और एक आज़ादी ऐसी भी हो / **प्रभात सिंह भारती** -- 222

5. भारत में अस्पृश्यता की समस्या एवं निवारण के लिए सुझाव / **डॉ. मुकेश कुमार मालवीय** -- 225

6. भारत माँ के वीर सेनानी : चंद्र शेखर आज़ाद / **डॉ. सन्तोष खन्ना** -- 231

7. बाल अपराध की समकालीन परिस्थितियाँ : एक संक्षिप्त विश्लेषण / **प्रो. मुक्ता त्रिपाठी** -- 235

8. समान नागरिक संहिता : एक संवैधानिक लक्ष्य / **अमृता वर्मा एवं डॉ. अजय भूपेंद्र जायसवाल** -- 241

9. चौरी-चौरा कांड बनाम भीड़ तंत्र / **संतोष बंसल** -- 250

10. विधि और अनुवाद / **रमेश चंद्र** -- 256

11. मुस्लिम महिलाएँ और समान नागरिक संहिता / **सन्तोष खन्ना** -- 260

12. कारगिल (कविता) / **नरेंद्र मोदी (अनुवाद : रश्मि भारद्वाज)** -- 262

13. वंदे मातरम् (कविता) / **नरेंद्र मोदी (अनुवाद : रश्मि भारद्वाज)** -- 263

14. प्रेम; यात्रा (कविता) / **नरेंद्र मोदी (अनुवाद : रश्मि भारद्वाज)** -- 264

15. ग़ज़ल / **विज्ञान व्रत** -- 265

16. कर्मठता में अनुकरणीय डॉ. सन्तोष खन्ना जी (साक्षात्कार) / **डॉ. कीर्ति गोयल** -- 266

17. विधि भारती परिषद् का भव्य सम्मान समारोह और पुस्तक लोकार्पण (रिपोर्ट) / **डॉ. आशु खन्ना** -- 270

18. भारत में न्याय की भाषा (पुस्तक समीक्षा) / **सन्तोष खन्ना** -- 273

19. Public Smoking : A Menace for The Society **/ Dr. Shaifali Chouhan** -- 275

20. Election Manifestos and Freebies : Observation & Directions of Supreme Court **/ Meenu Kumari** -- 284

21. Reproductive Rights of Women : An Analys of Pro Choice / **Akanksha Verma and Dr. Raj Kumar Yadav** -- 288

# लेखक मंडल


**सतीश चंद्र रस्तौगी :** पूर्व संयुक्त सचिव, लोक सभा सचिवालय, नई दिल्ली
**मोबाइल :** 9415021742

**सन्तोष खन्ना :** प्रधान संपादक, 'महिला विधि भारती' पत्रिका, शालीमार बाग

**प्रभात सिंह भारती :** तृतीय वर्ष छात्र, सी.पी.जे., सी.एच.एस. और एस.ओ.एल.

**डॉ. मुकेश कुमार मालवीय :** असिस्टेंट प्रोफेसर, विधि-विभाग, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)-221005

**प्रो. मुक्ता त्रिपाठी :** सहायक प्रोफेसर (हिंदी) बीएस अनंगपुरिया इंस्टीट्यूट ऑफ लॉ, फरीदाबाद

**अमृता वर्मा :** असिस्टेंट प्रोफेसर-विधि विभाग, वी.एस.एस.डी. कॉलेज, कानपुर

**डॉ. अजय भूपेंद्र जायसवाल :** प्रोफेसर-विधि विभाग, वी.एस.एस.डी. कॉलेज, कानपुर

**विज्ञान व्रत :** एन-138, सैक्टर - 25, नोएडा-201301, **मोबाइल :** 9810224571

**संतोष बंसल :** ए 1/7, मियाँवाली नगर, पश्चिम विहार, दिल्ली-110097
**मोबाइल :** 8860022613

**रमेश चंद्र :** 46/22, गांधी नगर, गुरुग्राम, **मोबाइल :** 9711011034

**डॉ. कीर्ति गोयल : ई-मेल :** drkeertygoyal@gmail.com
**मोबाइल :** 9215500756

**डॉ. आशु खन्ना :** बीएच-48, पूर्वी शालीमार बाग, दिल्ली-110088

**डॉ. शैफाली चौहान : E-mail :** shaifalichouhan19@gmail.com

**मीनू कुमारी :** सहायक प्रोफेसर (विधि), बीएस अनंगपुरिया इंस्टीट्यूट ऑफ लॉ, फरीदाबाद

**Akanksha Verma :** Doctoral Research Scholar, Department of Law, Central University of Punjab, 8851792476
**E-mail :** aakankshaverma.affable95@gmail.com

**Dr Raj Kumar Yadav :** Assistant Professor, Department of Law, Central University of Punjab, **Mobile :** 9466602200
**E-mail :** rajkumar.yadav@cup.edu.in

# संपादकीय

भारत को वर्ष 1947 में अंग्रेजी साम्राज्य के दीर्घकालीन आधिपत्य से मुक्ति मिली थी। इस 15 अगस्त, 2022 को भारत को आज़ाद हुए 75 वर्ष हो गए हैं और वह आज़ादी के 76वें वर्ष में प्रवेश कर गया है तथा पिछले वर्ष से लेकर 15 अगस्त, 2023 तक वह आज़ादी का अमृत महोत्सव मनाता रहेगा। इसी शुभ अवसर पर एक और शुभ समाचार मिला कि जिस ब्रिटेन ने भारत को लगभग 200 वर्ष तक अपना गुलाम बना कर रखा था और यहाँ की समृद्ध संपदा को लूट कर ब्रिटेन को सुख सुविधाओं से संपन्न बनाता रहा, अब उसी ब्रिटेन को स्वतंत्र भारत ने उसे अर्थव्यवस्था के धरातल पर पीछे खदेड़ कर रख दिया है। अभी तक ब्रिटेन की अर्थव्यवस्था विश्व में पाँचवें पायदान पर थी अब उस स्थान पर भारत पहुँच गया है और विश्व में भारत की अर्थव्यवस्था पाँचवें पायदान पर पहुँच गई है और अब वह ब्रिटेन के स्थान पर हो गया है। भारत का संकल्प अर्थव्यवस्था को 5 ट्रिलियन की अर्थव्यवस्था बनाना है तब तक वह और भी ऊँचे पायदान हासिल कर लेगा।

भारत ने पिछले 75 वर्षों में काफी उपलब्धियाँ अपने नाम कर ली हैं। 75 वर्ष में देश में लोकतंत्र काफी मजबूत हुआ है। यद्यपि देश के आज़ाद होने पर कहा गया था कि स्वतंत्र भारत स्वयं को आगे नहीं बढ़ा पाएगा, भारत ने ऐसी सब नकारात्मक भविष्यवाणियों को धूल चटा यह सिद्ध कर दिया है कि उसने जनसंख्या के क्षेत्र में विश्व में दूसरे स्थान पर होते हुए भी काफी सीमा तक लोकतंत्र और सुशासन के बल पर एक महाशक्ति बनने के रास्ते पर चलना आरंभ कर दिया है और समूचा विश्व आज उसे आशा भरी नज़रों से देख रहा है।

भारत अनेक क्षेत्रों में आत्मनिर्भर बन चुका है और अनेक क्षेत्रों में आत्मनिर्भर बनने की राह पर भी चल रहा है। किंतु अभी भी उसकी गणना विकसित राष्ट्रों में नहीं, विकासशील देशों में की जाती है। इस वर्ष 15 अगस्त को लाल किले की प्राचीर से राष्ट्र के नाम अपने भाषण में प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने देशवासियों का आह्वान करते हुए कहा कि वर्ष 2047 को जब भारत अपनी आज़ादी की एक शती मना रहा होगा तो वह विकसित राष्ट्र हो, इसके लिए देशवासियों को पाँच प्रण लेने होंगे और उन्हें पूरा करने के लिए प्रयत्नशील हो जाना होगा। आइए, देखते हैं कि प्रधानमंत्री श्री मोदी ने भारत को अगले 25 वर्ष में विकसित राष्ट्र बनाने के लिए क्या ब्लूप्रिंट दिया है।

यदि हम आज के भारत पर नज़र डालें तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि आज का युवा अपने स्वप्न, आशाओं और आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए जीवन के हर क्षेत्र में आगे बढ़ने के लिए सक्रिय हो रहा है और साहस और परिश्रम के साथ आगे बढ़ रहा है। हर भारतीय का यह स्वप्न

है कि जब हम 2047 में आज़ादी की शताब्दी मनाए तब तक देश एकदम विकसित हो जाए, उस समय तक न तो कोई भूखा रहे, स्वच्छ पेय जल सब की पहुँच में हो, हर सिर पर छत हो, हर व्यक्ति अपने बच्चों को अच्छी और संस्कारित शिक्षा दे सके और चिकित्सा सुविधाएँ हर व्यक्ति की पहुँच में हों। किंतु यह तभी संभव हो पाएगा जब समूचा देश इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रतिबद्ध हो जाए। इसी बात को ध्यान में रखते हुए प्रधानमंत्री मोदी जी ने कहा कि ''स्वतंत्र सेनानियों के सपनों को पूरा करने के लिए देश जब बड़े संकल्प को लेकर चल रहा है तो उसे विकास की रफ्तार बढ़ानी होगी। मैं युवाओं से देश के विकास के लिए अपने जीवन के अगले 25 वर्ष समर्पित करने का आग्रह करता हूँ हमें पूरी मानवता के विकास की दिशा में कार्य करना होगा।'' इसी लक्ष्य के लिए मोदी जी ने राष्ट्र से पाँच प्रण करने को कहा। उन्होंने कहा कि देश को आगे बढ़ाने के लिए जरूरी है कि बेशक हम राजनीतिक दृष्टि से गुलाम नहीं हैं परंतु मानसिक गुलामी से अभी आज़ाद नहीं हो पाए हैं। उसके लिए शत् प्रतिशत गुलामी की सोच से आज़ादी हासिल करनी होगी। हम रोज देख रहे हैं कि सरकार अपने धरातल पर गुलामी के चिन्हों से मुक्ति का प्रयास कर रही है। हाल में नौसेना के ध्वज में जो परिवर्तन किया गया, उसमें शुद्ध भारतीयता का समावेश किया गया। सेंट्रल विस्टा का नाम राजपथ से बदल कर कर्त्तव्य पथ कर दिया गया। इंडिया गेट पर स्वतंत्रता प्राप्ति के अनेक वर्षों तक जहाँ जार्ज पंचम की प्रतिमा लगी रही और उसे बहुत बाद में उतारा गया, वर्षों से खाली पड़े उस स्थान पर अब भारत माँ के अनुपम शौर्यशील वीर सेनानी नेताजी सुभाष चंद्र बोस की एक भव्य, विशाल और गगनचुंबी प्रतिमा स्थापित कर इस वीर सेनानी को राष्ट्र की ओर से श्रद्धांजलि अर्पित की गई। कहने वाले कह रहे हैं कि नाम बदलना केवल समस्याओं से ध्यान भटकाना है पर राष्ट्र के जीवन में प्रतीकों का अपना महत्त्व होता है और प्रतीकात्मक परिवर्तन वास्तविक परिवर्तन की दिशा तय करता है। गुलामी की मानसिकता से मुक्ति के लिए हमें सर्वप्रथम मैकेलियन शिक्षा-पद्धति से आज़ादी जरूरी है। सरकार नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 ले कर आई है, उसमें भी गुलामी की सोच से मुक्त होने के उपाय किए गए हैं। यह शिक्षा नीति भारतीय समाज के विद्वानजनों ने बनाई है। इसलिए कह सकते हैं कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति शिक्षा के क्षेत्र में दुनिया का श्रेष्ठतम दस्तावेज है। यह भारतीयों के लिए, भारतीयों द्वारा बनाई गई और भारत के लोगों द्वारा स्वीकृत शिक्षा नीति है। इसके द्वारा भारतीय शिक्षा के श्रेष्ठ होने की मानसिकता जब आकार लेगी तब समाज के अन्य हिस्सों से भी मानसिक गुलामी के अवशेष मिटेंगे। अपनी प्राचीन विरासत पर आधारित और भविष्योन्मुखी सभ्यता की निर्मिति स्वभाषा और स्वबोध के द्वारा ही हो सकती है। भारतीय भाषाओं को महत्त्व देना अर्थात् शिक्षा का माध्यम भारतीय भाषाओं को बनाना अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। अभी तक अधिकांश शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी रहा है। भाषा संस्कृति की वाहक होती है और आप जिस भाषा के माध्यम से शिक्षा ग्रहण करते हैं उसी भाषा की संस्कृति आपके जीवन का हिस्सा बन जाती है। जब तक भारतीय अंग्रेजी भाषा के माध्यम से शिक्षा ग्रहण करते रहेंगे, वे भारतीय से ज्यादा अंग्रेज बनते रहेंगे। इसीलिए नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति के तहत हर

बच्चे को पाँचवीं तक की आरंभिक शिक्षा भारतीय भाषाओं में देना जरूरी होगा ताकि उनके जीवन में भारतीय संस्कृति का संचार हो। तभी तो प्रधानमंत्री ने यह भी कहा कि हर भारतीय को अपनी विरासत पर गर्व करना होगा। आप अपनी धरा से जुड़ेगें, तभी आप आसमान में उड़ेंगे। यह संस्कृति से समृद्धि की ओर बढ़ने और विरासत को विकास की नींव बनाने का प्रण है। कोई भी देश या समाज अपनी विरासत-संस्कृति को सँजोए बिना मजबूत नहीं हो सकता है। यह किसी भी राष्ट्र की एकता और समृद्धि का मूल तत्त्व होता है। तभी एकता और एकजुटता की शक्ति के साथ एक भारत श्रेष्ठ भारत का निर्माण करना है। यह सभी जानते हैं कि एकता में शक्ति होती है। अगर व्यक्तियों या संस्थाओं का समूह मिल कर कोई काम करता है तो वह न केवल तीव्र गति से होता है बल्कि उसमें सशक्तता के साथ ही दीर्घकालिक उद्देश्यों को हासिल करने की शक्ति भी होती है।

प्रधानमंत्री ने देश के प्रत्येक नागरिक से अपने कर्त्तव्यों के प्रति समर्पित रहने का आह्वान भी किया। उन्होंने कहा कि जब तक भारत का हर एक नागरिक अपने कर्त्तव्यों के प्रति समर्पित नहीं होता है, उस समय तक किसी भी बड़े सामाजिक बदलाव को परिलक्षित करने का लक्ष्य हासिल नहीं किया जा सकता है। इसके लिए जरूरी है कि भाई-भतीजावाद और भ्रष्टाचार से भारत को मुक्ति दिलाई जाए।

भ्रष्टाचार और परिवारवाद को दो बड़ी चुनौतियाँ और विकृतियाँ करार देते हुए मोदी ने कहा कि अगर समय रहते इनका समाधान नहीं किया गया तो यह विकराल रूप ले सकती हैं। उन्होने कहा, ''भारत जैसे लोकतंत्र में जहाँ लोग गरीबी से जूझ रहे हैं, तब यह दृश्य देखने को मिलते हैं कि एक तरफ वह लोग हैं जिनके पास रहने के लिए जगह नहीं है... दूसरी तरफ वह लोग हैं, जिनके पास अपना चोरी किया हुआ माल रखने के लिए जगह नहीं है। प्रधानमंत्री वास्तव में हाल के दिनों कुछ सत्तारूढ़ तथा कुछ अन्य लोगों के यहाँ मिले नोटों के पहाड़ से विचलित थे और इसके लिए देश का हर व्यक्ति विचलित है। प्रधानमंत्री ने वर्ष 2008 में काले धन पर अंकुश लगाने के लिए नोटबंदी की थी। लेकिन कुछ लोग हैं कि भ्रष्टाचार किए बिना मानते ही नहीं हैं। इस के लिए कदम तो उठाने पड़ेंगे चाहे भ्रष्टाचारी चिल्लाते रहें कि संविधान और लोकतंत्र ख़तरे में पड़ गया और सरकारी एजेंसियों का दुरूपयोग किया जा रहा है।

मोदीजी ने कहा है कि ''हमारी कोशिश है कि जिन्होंने देश को लूटा है, उनको लौटाना पड़े... वह स्थिति हम पैदा करेंगे।'' उन्होंने कहा, ''वे अब बच नहीं पाएँगे... इस मिजाज के साथ भ्रष्टाचार के खिलाफ एक निर्णायक कालखंड में हिंदुस्तान कदम रख रहा है। भ्रष्टाचार दीमक की तरह देश को खोखला कर रहा है... इसके खिलाफ लड़ाई तेज करनी है व इसे निर्णायक मोड़ पर लेकर जाना ही है।''

उन्होंने इस लड़ाई में देशवासियों का सहयोग माँगा और कहा कि आज देश में भ्रष्टाचार के प्रति नफरत दिखती है और वह व्यक्त भी होती है लेकिन कभी-कभी भ्रष्टाचारियों के प्रति उदारता भी दिखाई जाती है जो शोभा नहीं देता है। ''कई लोग तो इस हद तक चले जाते हैं

कि अदालत में सज़ा हो चुकी हो... भ्रष्टाचार सिद्ध हो चुका हो... जेल जाना तय हो चुका हो... जेल गुजार रहे हों... इसके बावजूद उनका महिमामंडन किया जा रहा है, उनकी शान-शौकत में लगे रहते हैं, उनकी प्रतिष्ठा बनाने में लगे रहते हैं।'' उन्होंने कहा कि जब तक समाज में गंदगी के प्रति नफरत नहीं होती है, स्वच्छता के प्रति चेतना भी नहीं जागती है।

भाई-भतीजावाद और परिवारवाद के खिलाफ हल्ला बोलते हुए प्रधानमंत्री ने कहा कि ''हिंदुस्तान की राजनीति के शुद्धिकरण के लिए भी और सभी संस्थाओं के शुद्धिकरण के लिए भी... इस परिवारवादी मानसिकता से मुक्ति दिलानी होगी। योग्यता के आधार पर देश को आगे ले जाने की ओर हमें बढ़ना होगा। यह अनिवार्यता है।''

वास्तव में यह कहना ही पड़ेगा कि देश से भ्रष्टाचार और भाई-भतीजावाद की बुराई को नेस्तनाबूत करने के लिए समूचे देश को कमर कसनी होगी। प्रधानमंत्री ने अगले 25 वर्ष का बलू प्रिंट दिया है, इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि प्रधानमंत्री तब तक अपने पद पर बने रहना चाहते हैं। वह तो देश का युवाओं का आह्वान कर रहे हैं कि वह आगे आएँ और देश को प्रथम वरीयता देते हुए स्वयं को उसके प्रति समर्पित करें।

वैसे प्रधानमंत्री भारत को एक विकसित देश बनाने के लिए ऐसी नीतियाँ बनानी आरंभ कर चुके हैं जिससे इस लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके। इस समय लगभग समूचे विश्व के देशों में आर्थिक स्थिति डाँवाडोल बनी हुई है और कोरोना पेंडेमिक, यूक्रेन युद्ध और प्राकृतिक प्रकोप के कारण वर्ष 2023 में वैश्विक स्तर पर आर्थिक मंदी का सामना करना होगा, ऐसे में भारत में अपनी नीतियों के कारण आर्थिक स्थिति आशाजनक रूप से सही चल रही है। यद्यपि ग्लोबल वार्मिंग की वजह से भारत में अन्न के उत्पादन पर कुछ सीमा तक विसरीत प्रभाव पड़ा है फिर भी भारत में अस्सी करोड़ से अधिक जनसंख्या को जो अन्न आदि का मुफ्त वितरण किया जा रहा है, इस खाद्य सुरक्षा के कारण यहाँ लोगों को बहुत राहत मिली है। अर्थशास्त्री विद्वानों का अनुमान है कि भारत की अर्थ व्यवस्था की दर ठीक रहेगी।

भारत में भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने के लिए भी आवश्यक कदम उठाए जा रहे हैं, इस के लिए सरकारी तंत्र सक्रिय हो रहा है और भ्रष्ट तत्त्वों को किसी कीमत पर बख्शा नहीं जाएगा।

भारत ही क्या, विश्व में आतंकवाद का दंश भी तबाही मचाए हुए है। कश्मीर समस्या और सांप्रदायिकता के इतिहास के कारण इस समस्या का भारत कुछ अधिक ही इसका शिकार हैं। परंतु सरकार की इस संबंध में आतंकवाद के संबंध में जीरो टोलरेंस की नीति से इस पर समुचित उपाय किए जा रहे हैं। पाकिस्तान विश्व में आतंकवाद का निर्यातक बना हुआ है। भारत ने इस संबंध में पाकिस्तान के प्रति कड़ा रुख अपनाया हुआ है। अभी समरकंद में हुए शंघाई सहयोग संगठन की बैठक में पाकिस्तान प्रधानमंत्री मोदी जी से वार्ता करने की कोशिश में था परंतु भारत ने कह दिया कि जब तक पाकिस्तान अपने यहाँ से आतंकवाद के अड्डे बंद नहीं करता, तब तक कोई वार्ता नहीं। वस्तुतः भारत को ऐसा कड़ा रुख अपनाना ही चाहिए।

❑

सतीश चंद्र रस्तौगी

# संसदीय समितियाँ

स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ ही भारत के तत्कालीन नेतृत्व ने भारत के लिए जो शासन प्रणाली चुनी वह मुख्यतः ब्रिटिश संसद को प्रतिमान बना कर चुनी, इस कारण यह अरोप भी सुनने को मिला कि भारतीय संसद केवल ब्रिटिश संसद की नकल मात्र है। स्वतंत्रता के 75वें वर्ष में प्रवेश कर जब स्वतंत्रता का अमृत महोत्सव मनाया जा रहा हैं तब इससे बेहतर क्या होगा कि इस आक्षेप का उचित उतर सबके सामने रखा जाए।

इन 75 वर्षों में अपने अस्तित्व में आने के बाद से भारतीय संसद के दोनों सदनों ने भारतीय जनता की आकांक्षाओं और सपनों को पूरा करने के उद्देश्य से समय-समय पा अपने प्रक्रिया संबंधी नियमों में अनेकानेक परिवर्तन व सुधार किए हैं। ये परिवर्तन/सुधार इस आक्षेप को पूर्णतया नकारने में सक्षम हैं कि भारतीय संसदीय प्रणाली ब्रिटिश संसदीय प्रणाली की प्रतिलिपि मात्र है।

भारतीय संसद की कार्य-प्रणाली में इन वर्षों में हुए परिवर्तनों/सुधारों का सीमित शब्दों में वर्णन करना संभव नहीं है। तथापि समय-समय पर आवश्यकतानुसार गठित संसदीय समितियों के संक्षिप्त वर्णन के माध्यम से यह दिखाने का प्रयास है कि भारतीय संसद ब्रिटिश संसद का अंधानुकरण नहीं करती है।

संसद के सम्मुख अनेक विषय विचार के लिए आते हैं। इन सबका विशद अध्ययन, विश्लेषण, परीक्षण सीमिति समय के कारण संभव नहीं हो पाता, कुछ ऐसे विषय भी होते हैं जो विशेषज्ञों द्वारा गहन अध्ययन, परीक्षण की अपेक्षा रखते हैं, संसद इस दायित्व को अपनी विभिन्न समितियों के माध्यम से निभाती है।

संसद की समिति से अभिप्राय उस समिति से है जिसे सभा (लोक सभा/राज्य सभा) नियुक्त करे या निर्वाचित करे या संबोधित पीठासीन अधिकारी नाम निर्देशित करे और जो पीठासीन अधिकारी के निर्देशों के अंतर्गत कार्य करे और अपना प्रतिवेदन संबंधित सदन/पीठासीन अधिकारी को प्रस्तुत करे और जिसके सचिवालय की व्यवस्था लोक सभा/राज्य सभा सचिवालय द्वारा की जाए।

संसदीय समितियों के निर्वाचन/गठन करते समय इस बात को ध्यान में रखा जाता है कि यथासंभव प्रत्येक राजनीतिक दल को सदन में उसकी सदस्य संख्या के अनुपात में समिति

में प्रतिनिधित्व मिले। इस कारण संसदीय समिति को 'लघु संसद' -- 'मिनी पार्लियामेंट' भी कहा जाता है।

भारतीय संसद ने कुछ समितियों को कार्यपालिका के प्रभाव से मुक्त रखने के लिए और यह सुनिश्चित करने के लिए कि अधिकारीगण निर्भीकता से समिति के सम्मुख अपना साक्ष्य दे सकें, मंत्रियों को उनका (समितियों का) सदस्य निर्वाचित/नियुक्त करने पर प्रतिबंध है। यदि कोई सदस्य बाद में मंत्री बन जाता है तो वह नियुक्ति की तिथि से समिति का सदस्य नहीं रहता। इस श्रेणी में जो समितियाँ आती हैं वे हैं -- लोक लेखा समिति, प्राक्कलन समिति, सरकारी उपक्रमों संबंधी समिति, याचिका समिति (लोक सभा में) अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के कल्याण संबंधी समिति, महिला सशक्तिकरण समिति, सरकारी आश्वासनों संबंधी समिति (लोक सभा में), एवं अन्य पिछड़ा वर्ग कल्याण संबंधी समिति।

**संयुक्त समितियाँ**

कई बार ऐसे अवसर आते हैं जब किसी विषय के अध्ययन के लिए संसद के दोनों सदनों के सदस्यों की समिति नियुक्त करने की आवश्यकता होती है। यह समिति संयुक्त समिति कहलाती है। इसमें सदस्यों की नियुक्ति/निर्वाचन संबंधित सदन द्वारा किया जाता है या फिर दोनों सदनों के पीठासीन अधिकारियों द्वारा नाम निर्देशित किया जाता है। इन समितियों में लोक सभा व राज्य सभा के सदस्यों की संख्या का अनुपात 2:1 होता है।

**समितियाँ स्थायी व तदर्थ समिति**

समितियों को उनके कार्यकाल के आधार पर दो वर्गों में बाँटा जा सकता है -- स्थायी समिति व तदर्थ समिति, स्थायी समिति का कार्यकाल नियम/अधिनियम में पूर्व निर्धारित होता है। सामान्यतः स्थायी समिति का कार्यकाल एक वर्ष होता है।

तदर्थ समिति वह समिति होती है जो किसी विषय विशेष के अध्ययन हेतु नियुक्त/निर्वाचित की जाती है तथा विधेयकों संबंधी प्रवर समितियाँ। इनका कार्यकाल निश्चित नहीं होता। ये अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करने के साथ ही अस्तित्व में नहीं रहती। प्रवर समिति एक सदन की भी हो सकती है और दोनों सदनों के सदस्यों की संयुक्त प्रवर समिति भी।

समितियों के दायित्व, अधिकार व कार्यप्रणाली आदि एक स्वतंत्र लेख की विषय-वस्तु है। यहाँ हमारा उद्देश्य संसदीय समिति प्रणाली के विकास व मुख्य स्थायी समितियों से संक्षिप्त परिचय कराना है।

जब भारत स्वतंत्र हुआ तब भारतीय संसद को जो समितियाँ विरासत में मिलीं, उनमें से लोक लेखा समिति व लोक याचिका समिति उल्लेखनीय हैं; पर ये दोनों समितियाँ संसदीय समिति की परिभाषा की कसौटी पर खरी नहीं उतरतीं थीं। कारण, इनका सभापतित्व संबंधित विभाग का मंत्री करता था और सचिवालय सेवाएँ भी सरकार के संबंधित विभाग द्वारा प्रदान

की जाती थीं (यहाँ यह उल्लेखनीय है कि तत्कालीन लेजिस्लेटिव असैम्बली का स्वतंत्र सचिवालय 10 जनवरी, 1929 को अस्तित्व में आ चुका था)।

### लोक लेखा समिति

इस समिति का गठन सर्वप्रथम 1921 में हुअ था, (इस समिति के अस्तित्व के सौ वर्ष पूरा होने संबंधी कार्यक्रम 2021 में मनाया गया था) भारतीय संविधान को लागू होने पर जो सबसे बड़ा क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ वह इस समिति के कार्यपालिका से मुक्त होने का था। इसकी सदस्य संख्या में वृद्धि की गई। सदस्यों का निर्वाचन सदन द्वारा किया जाने लगा। सभापति लोक सभा अध्यक्ष द्वारा नियुक्त किया जाने लगा। तीसरी लोक सभा तक इसका सभापति शासक दल का ही सदस्य होता था। चौथी लोक सभा में पहली बार विपक्षी दल के सदस्य को इसका सभापति नियुक्त किया गया और तभी से यह परंपरा बन गई है।

### याचिका समिति

भारतीय जनता के अपनी संसद को याचिका देने के अधिकार को मान्यता देते हुए तत्कालीन पीठासीन अधिकारी ने 20 फरवरी, 1924 को लोक सभा याचिका समिति का गठन किया। वर्ष 1933 में इसका नाम याचिका समिति कर दिया गया। सदन के सभी दलों को सम्यक् प्रतिनिधित्व देने के उद्देश्य से अप्रैल 1954 में लोक सभा की याचिका समिति की सदस्य संख्या 15 कर दी गई। राज्य सभा में इस समिति की सदस्य संख्य 10 है। (लोक सभा व राज्य सभा की याचिका समिति में जो मुख्य अंतर है वह यह है कि राज्य सभा में एक मंत्री इस समिति का सदस्य नाम निर्देशित हो सकता है)।

यह समिति साधारण जनता को संसद का द्वार खटखटा कर कार्यपालिका के खिलाफ अपनी शिकायत दर्ज़ कराने और उसका निवारण करवाने का एक सशक्त माध्यम है। यह समिति आम जनता के अभ्यावेदनों पर भी विचार करती है और उचित सिफारिश करती है।

ये तो थीं वे प्रमुख समितियाँ जो विरासत में मिली थीं। अब हम उन समितियों का उल्लेख करेंगे जो समय-समय पर अस्तित्व में आईं।

### विशेषाधिकार समिति

संसद, इसकी समितियाँ एवे सदस्य बिना किसी बाधा के, बिना किसी क़ानूनी कार्यवाही के भय के अपने संवैधानिक दायित्व निभा सकें, इसलिए उन्हें कुछ विशेष अधिकार/छूट प्रदान की गई है। इन अधिकारों के उल्लंघन संबंधी सदस्यों की शिकायतों पर विचार करने के लिए 1 अप्रैल, 1950 को लोक सभा में विशेषाधिकार समिति का गठन किया गया। लोक सभा में इस समिति में 16 सदस्य होते हैं जो लोक सभा अध्यक्ष द्वारा नाम निर्देशित किए जाते हैं। इसका सभापति भी लोक सभा अध्यक्ष द्वारा नियुक्त किया जाता है। राज्य सभा में इस समिति में 10 सदस्य होते हैं और समिति का सभापति राज्य सभा के सभापति द्वारा नियुक्त

किया जाता है। लोक सभा व राज्य सभा की ये समिति नई समिति के गठन तक कार्य करती हैं।

**प्राक्कलन समिति**

कार्यपालिका द्वारा किए जाने वाले व्यय पर बेहतर वित्तीय नियंत्रण के उद्देश्य से 10 अप्रैल, 1950 को प्राक्कलन समिति (एस्टीमेट कमेटी) का गठन किया गया। इसमें केवल लोक सभा के 30 सदस्य निर्वाचित किए जाते हैं। समिति का सभापति लोक सभा अध्यक्ष द्वारा नियुक्त किया जाता है। इसका कार्यकाल एक वर्ष होता है।

**कार्य मंत्राणा समिति**

ब्रिटिश संसदीय परंपराओं से हट कर भारतीय संसद ने कार्य मंत्राणा समिति का गठन किया। इस समिति का गठन पहली बार 1951 में किया गया था। इस समिति में लोक सभा अध्यक्ष सहित 15 सदस्य होते हैं। लोक सभा अध्यक्ष इसका पदेन सभापति होता हे। राज्य सभा की कार्य मंत्राणा समिति में राज्य सभा के सभापति व उप-सभापति सहित 11 सदस्य होते हैं। यह समिति सरकारी विधेयकों व अन्य विषयों पर चर्चा करने के लिए समय के बँटवारे की सिफारिश करती है।

**सरकारी आश्वासनों संबंधी समिति**

मंत्रियों द्वारा समय-समय पर सदन के अंदर अश्वासन/वचन आदि दिए जाते हैं। प्रतिज्ञाएँ की जाती हैं। ये आश्वासन, प्रतिज्ञाएँ या वचन मूर्त रूप से परिवर्तित किए गए या नहीं, इनका परिपालन किया गया या नहीं और परिपालन करने में अनावश्यक देरी तो नहीं की गई, इन सब की छानबीन करने के लिए 1 दिसंबर, 1953 को इस समिति का गठन किया गया था। लोक सभा में इस समिति में 15 सदस्य लोक सभा अध्यक्ष द्वारा नाम निर्देशित किए जाते हैं। सभापति भी उन्हीं के द्वारा नियुक्त किया जाता है। इसका कार्यकाल एक वर्ष है। राज्य सभा में इस समिति के 10 सदस्य होते हैं व मंत्री को इस समिति का सदस्य नाम निर्देशित किया जा सकता है।

यह समिति भारतीय संसद की अपनी खोज है एवं संसदीय समिति प्रणाली में एक महत्त्वपूर्ण योगदान है।

**ग़ैर-सरकारी सदस्यों के विधेयकों व संकल्पों संबंधी समिति**

भारतीय संसद ग़ैर-सरकारी सदस्यों को विधेयक व संकल्प प्रस्तुत करने का अधिकार व अवसर प्रदान करती है। ग़ैर-सरकारी सदस्यों से अभिप्राय उन सदस्यों से होता है जो मंत्री मंडल के सदस्य नहीं होते। चाहे वे शासक दल से संबंध रखते हों या विपक्षी दलों से। इस क्षेत्रा में सभी सदस्यों को समान अवसर मिले और विधेयक/संकल्प अपनी विषय-वस्तु के महत्त्व

और सामयिकता के आधार पर सदन के सम्मुख लाए जाएँ। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु लोक सभा में 1 दिसंबर, 1953 को 15 सदस्यों की इस समिति का गठन किया गया। उपाध्यक्ष जो इस समिति के सदस्य होते हैं, इसके पदेन सभापति होते हैं। राज्य सभा में इस प्रकार की कोई समिति नहीं है और संबंधित कार्य को उस सदन की कार्य मंत्राणा समिति ही संपन्न करती है।

### अधीनस्थ विधान संबंधी समिति

संसद अधिनियम बनाते समय उसके उद्देश्यों की पूर्ति हेतु नियम, उपनियम आदि बनाने की शक्ति कार्यपालिका को दे देती है। इस शक्ति के अधीन बनाए गए नियम, उपनियम आदि को अधीनस्थ विधान कहा जाता है। कार्यपालिका द्वारा इस शक्ति का प्रयोग करते हुए बनाए गए नियम आदि उसे प्रदत्त अधिकारों की सीमा में ही बनाए गए हैं या उसके द्वारा संसद द्वारा प्रदत्त शक्ति का उल्लंघन तो नहीं किया गया है, इसकी जाँच के लिए अधीनस्थ विधान संबंधी समिति का गठन 1 दिसंबर, 1953 को किया गया। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि इस समिति के गठन का सुझाव स्वयं तत्कालीन विधि मंत्री डॉ. अंबेडकर ने अनंतिम संसद में 1950 में बजट सत्रा के दौरान अपने भाषण में दिया था। राज्य सभा में भी इस समिति के 15 सदस्य होते हैं जो सभापति राज्य सभा द्वारा नाम निर्देशित किए जाते हैं। समिति के सभापति की नियुक्ति संबंधित पीठासीन अधिकारी द्वारा की जाती है।

### सभा की बैठकों से सदस्यों की अनुपस्थिति संबंधी समिति

संविधान के प्रावधानों के अनुसार यदि कोई संसद सदस्य संबंधित सदन की अनुमति के बिना सभा की बैठकों से 60 दिन या अधिक की कालावधि तक अनुपस्थित रहता है तो सदन उस सदस्य का स्थान रिक्त घोषित कर सकता है। इस परिस्थिति से बचने के लिए सदस्य सभा की बैठकों से अनुपस्थित रहने की अनुमति के लिए संबंधित सदन को आवेदन पत्र देता है। इस आवेदन पत्रें की जाँच के लिए लोक सभा ने 12 मार्च, 1954 को एक समिति का गठन किया। इस समिति में 15 सदस्य होते हैं जो लोक सभा अध्यक्ष द्वारा नाम निर्देशित किए जाते हैं। समिति के ही किसी एक सदस्य को लोक सभा अध्यक्ष द्वारा सभापति नियुक्त किया जाता है। इस समिति के गठन से पूर्व इन आवेदन पत्रें का निपटारा स्वतः सदन ही करता था। राज्य सभा में इस प्रकार की किसी समिति का गठन नहीं किया गया है।

### सरकारी उपक्रमों संबंधी समिति

सरकार द्वारा स्थापित व संचालित सरकारी उपक्रमों पर बेहतर संसदीय नियंत्रण के उद्देश्य से 1 मई, 1964 को लोक सभा द्वारा सरकारी उपक्रमों संबंधी समिति का गठन किया। इस समिति में कुल 22 सदस्य होते हैं -- 15 सदस्य लोक सभा द्वारा व 7 सदस्य राज्य सभा का प्रतिनिधत्व करते हैं। लोक सभा सदस्य सदन द्वारा निर्वाचित किए जाते हैं। राज्य सभा

अपने सदस्यों को नाम निर्दिष्ट करती है। समिति के सभापीठ की नियुक्ति लोक सभा अध्यक्ष द्वारा की जाती है। सचिवालयी सेवाएँ लोक सभा सचिवालय द्वारा प्रदान की जाती हैं।

**अनुसूचित जातियों द्वारा अनुसूचित जनजातियों के कल्याण संबंधी समिति**

राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग व राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग के प्रतिवेदनों पर विचार करने व संबंधित विषयों पर विचार करने और आवश्यक सुझाव/सिफारिश करने के लिए लोक सभा द्वारा 30-8-1968 को तीस सदस्यों की एक समिति के गठन का प्रस्ताव स्वीकार किया गया। राज्य सभा द्वारा इस प्रस्ताव को 25-11-1968 को सहमति प्रदान की गई। इस प्रस्ताव के फलस्वरूप गठित पहली समिति की बैठक 18-12-1968 को हुई। इस समिति में लोक सभा व राज्य सभी द्वारा क्रमशः 20 व 10 सदस्य निर्वाचित किए जाते हैं। समिति का सभापति लोक सभा अध्यक्ष द्वारा नियुक्त किया जाता है।

**सभापटल पर रखे गए पत्राों संबंधी समिति**

वर्ष 1975 में संसदीय समितियों के परिवार में एक नई समिति जुड़ी जिसका नाम रखा गया सभा पटल पर रखे गए पत्रें संबंधी समिति। जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है कि समिति विभिन्न मंत्राालयों की ओर से मंत्रियों द्वारा सभा के पटल पर रखे गए विभिन्न पत्रें की जाँच करती है। यह समिति यह भी देखती है कि क्या संबंधित पत्र का हिंदी संस्करण भी सभा के पटल पर रखा गया है या नहीं। इस समिति में लोक सभा अध्यक्ष द्वारा नाम निर्देशित 15 सदस्य होते हैं। समिति का सभापति भी लोक सभा अध्यक्ष द्वारा नियुक्त किया जाता है। राज्य सभा में इस समिति से संबंधित नियम 15 जनवरी, 1983 से लागू किए गए। उस सदन की समिति में 10 सदस्य होते हैं जो राज्य सभा के सभापति द्वारा नाम निर्देशित किए जाते हैं। वही इस समिति के सभापति की नियुक्ति करता है। लोक सभा में इस समिति का कार्यकाल एक वर्ष है और राज्य सभा में यह समिति नई समिति के गठन तक कार्य करती है।

**महिला सशक्तिकरण समिति**

भारतीय संसद में समितियों का गठन अनवरत् प्रक्रिया है। जब भी अवश्यकता हुई, समिति का गठन किया गया है। महिलाओं के सशक्तिकरण, देश की प्रगति में उनके योगदान को बढ़ाने के उद्देश्य से भारतीय संसद 29 अप्रैल, 1997 को तीस सदस्यों की एक समिति का गठन किया गया। इसका नाम इसके उद्देश्य के अनुरूप ही 'महिला सशक्तिकरण समिति' रखा गया। इसके 20 सदस्य अध्यक्ष लोक सभा द्वारा व 10 सदस्य सभापति राज्य सभा द्वारा नाम निर्देशित किए जाते हैं। समिति के सभापति की नियुक्ति लोक सभा अध्यक्ष द्वारा की जाती है।

**आचार समिति**

दोनों सदनों में पृथक्-पृथक आचार समिति का भी गठन किया गया है। लोक सभा में 15 सदस्यों की इस समिति का गठन 16 मई, 2000 को किया गया था। सदस्यों का नाम निर्देशन व सभापति की नियुक्ति लोक सभा अध्यक्ष द्वारा की जाती है। राज्य सभा में इस समिति का गठन 4 मार्च, 1997 को किया गया था। इसमें 10 सदस्यों का नाम निर्देशन व सभापति की नियुक्ति सभापति राज्य सभा द्वारा की जाती है। लोक सभा में इस समिति का कार्यकाल 1 वर्ष है और राज्य सभा की समिति नई समिति के गठन तक कार्य करती है।

**अन्य पिछड़ा वर्ग कल्याण संबंधी समिति**

पिछड़ा वर्ग राष्ट्रीय अयोग के प्रतिवेदनों पर विचार करने के लिए और उनके कल्याण के लिए उचित सिफारिशें करने के लिए जून, 2012 में इस समिति का गठन किया गया। इसमें दोनों सदनों के सदस्य 2:1 के अनुपात में होते हैं और उन्हें संबंधित सदन द्वारा निर्वाचित किया जाता है। समिति के सभापति की नियुक्ति अध्यक्ष लोक सभा द्वारा की जाती है।

**संसद सदस्यों के वेतन तथा भत्ते संबंधी संयुक्त समिति**

संसद सदस्य, वेतन, भत्ते तथा पेंशन अधिनियम की धारा 9 के अंतर्गत नियम बनाने के प्रयोजन से दोनों सदनों की एक संयुक्त समिति का 6 सितंबर, 1954 को गठन किया गया। इस समिति में 15 सदस्य होते हैं। दस सदस्य लोक सभा अध्यक्ष द्वारा व पाँच सदस्य राज्य सभा के सभापति द्वारा नाम निर्देशित किए जाते हैं। समिति अपना सभापति स्वयं ही चुनती है। इस समिति का सदस्य अपने नाम निर्देशन की तिथि से एक वर्ष की अवधि तक इसका सदस्य रहता है। आकस्मिक रिक्ति में नाम निर्देशित सदस्य भी पूरे एक वर्ष तक समिति का सदस्य रहता है। समिति को सचिवालयी सेवाएँ लोक सभा सचिवालय द्वारा प्रदान की जाती हैं।

**लाभ के पदों संबंधी संयुक्त समिति**

भारतीय संविधान के प्रविधानों के अनुसार यदि कोई व्यक्ति केंद्र या राज्य सरकार के अधीन किसी लाभ के पद (आफ़िस ऑफ प्रॉफिट) पर आसीन होता हे तो वह लोक सभा/राज्य सभा का सदसय बनने के योग्य नहीं रहता। समय-समय पर इन पदों की जाँच करने और उचित सिफारिश करने हेतु संसद ने वर्ष 1959 में 15 सदस्यों की एक संयुक्त समिति का गठन किया। इस समिति का कार्यकाल लोक सभा के कार्यकल तक होता है। सदस्य संबंधित सदन द्वारा निर्वाचित किए जाते हैं। सभापति की नियुक्ति लोक सभा अध्यक्ष द्वारा की जाती है। सचिवालयी सेवाएँ लोक सभा सचिवालय द्वारा प्रदान की जाती हैं।

उपर्युक्त स्थायी समितियों के अतिरिक्त दोनों सदनों में पृथक्-पृथक नियम समिति व

सामान्य प्रयोजन समिति भी कार्यरत् होती है।

संसद सदस्यों के आवास संबंधी मसलों पर विचार करने के लिए दोनों सदनों में आवास समिति का गठन किया जाता है।

संसद ग्रंथालय से संबंधित विषयों पर विचार करने और आवश्यक सुझाव देने के लिए ग्रंथालय समिति का गठन किया गया है। इसमें लोक सभा उपाध्यक्ष सहित 6 सदस्य लोक सभा ओर 3 सदस्य राज्य सभा का प्रतिनिधत्व करते हैं। लोक सभा उपाध्यक्ष इसका पदेन सभापति होता है।

संसदीय समितियों की विकास यात्राा अनवरत् रूप से चालू है। स्थायी समितियों के परिवार में 24 विभागों संबंधी स्थायी समितियाँ भी जुड़ गई हैं। इनके गठन, कार्य-प्रणाली आदि एक स्वतंत्र लेख की अपेक्षा रखते हैं। भारतीय संसद समय-समय पर आवश्यकतानुसार तदर्थ समितियों का गठन भी करती है। ये एक सदन की भी हो सकती है या फिर दोनों सदनों की तदर्थ संयुक्त समितियाँ। ये समितियाँ अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करते ही अस्तित्व खो देती हैं।

संसदीय समितियाँ चाहे स्थायी हों या तदर्थ, न केवल अपने कार्य-क्षेत्रा में आने वाले विषय का गहन अध्ययन करती हैं वरन् विशेषज्ञों जनता जनार्दन के विचारों से भी संसद को अपने प्रतिवेदन के माध्यम से अवगत कराती हैं। संसदीय समितियाँ ऐसी संस्था हैं जो आम जनता को संसद तक अपने विचार, सुझाव पहुँचाने और संसद से जुड़ने का अवसर प्रदान करती हैं। यह संसद के विभिन्न राजनीतिक दलों व भारत के विभिन्न क्षेत्रों से आने वाले सदस्यों को दल, भाषा, प्रांत आदि की सीामाएँ तोड़ कर एक-दूसरे को जनने और पास आने का अवसर प्रदान करती हैं।

❑

**संदर्भ**


1. लोक सभा के प्रक्रिया तथा संचालन नियम
2. Rules of Procodudure and Conduct of Business in Council of States
3. Practice and Procodure of Parliament by Kaul and Shakdhar (7th edition)

सन्तोष खन्ना

# वैवाहिक बलात्कार और महिलाओं के अधिकार

पिछले कुछ दशकों में महिलाओं को क़ानून ने कई नए अधिकार प्रदान कर उनका सशक्तिकरण किया है। वर्ष 2005 में संसद ने परिवार में महिलाओं पर होने वाली हिंसा से संरक्षण के लिए घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005 बनाया जिसके अंतर्गत महिलाओं के शारीरिक, लैंगिक और मानसिक उत्पीड़न को शामिल किया गया है। इस क़ानून में घरेलू हिंसा की परिभाषा को काफी व्यापक बना दिया गया है। इसी प्रकार, वर्ष 2005 में ही हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम में संशोधन कर महिलाओं को संपत्ति में सहदायिकी अधिकार भी दे दिया गया है। इस से पहले पहले माँ के गर्भ में आते ही बेटे को संपत्ति में सहदायकी अधिकार मिल जाता था। यह अधिकार महिलाओं को नहीं था किंतु अब वर्ष 2005 में हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम में संशोधन करने के बाद संपत्ति में बेटा-बेटी को सम्मान संपत्ति अधिकार मिल गए हैं। इसी प्रकार, वर्ष 2013 में कार्यस्थल पर महिलाओं के साथ लैंगिक उत्पीड़न (रोकथाम और निवारण) अधिनियम बनाया गया है। यही नहीं, मुस्लिम महिलाओं को तीन तलाक से मुक्ति के लिए वर्ष 2019 में संसद ने क़ानून बना कर उनके अधिकारों की सुरक्षा की है। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि महिलाओं के सशक्तिकरण की दिशा में बराबर क़दम उठाए जा रहे हैं।

वर्षो से महिलाओं द्वारा वैवाहिक बलात्कार को अपराध घोषित करने की माँग उठाई जा रही है ताकि महिलाओं को संविधान के विभिन्न प्रावधानों में विशेष रूप से अनुच्छेद 21 में मिली सुरक्षा का अधिकार मिल सके। उस संदर्भ में आजकल भारत में वैवाहिक बलात्कार एक बड़ा मुद्दा बना हुआ है। यद्यपि वैवाहिक बलात्कार घरेलू हिंसा का ही एक रूप है परंतु इसे भारतीय दंड संहिता की धारा 375 में दिए गए एक अपवाद के रूप में देखा जाता है। वैवाहिक बलात्कार महिलाओं की स्वायत्तता, गरिमा और मौलिक अधिकारों पर एक कुठाराघात माना जाता है।

भारत में घरेलू हिंसा एक गंभीर समस्या रही है और हाल के वर्षों में इसमें वृद्धि देखी गई है। 'राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो' (NCRB) द्वारा जारी 'भारत में अपराध-2019' (Crime in India-2019) रिपोर्ट के अनुसार, भारत में लगभग 70 प्रतिशत महिलाएँ घरेलू हिंसा की शिकार हैं।

वैवाहिक बलात्कार भी घरेलू हिंसा का ही एक रूप है। वैवाहिक बलात्कार से आशय पत्नी की सहमति के बगैर उसे यौन संबंध बनाने के लिए विवश करने से है। ऐसे कृत्य अन्यायपूर्ण

होते हैं परंतु फिर भी महिलाओं को नीचा दिखाने और अपमानित करने के ऐसे मामले असामान्य नहीं हैं। इस संदर्भ में लंबे अरसे से यह माँग उठती रही है कि वैवाहिक बलात्कार को अपराध घोषित किया जाए।

वर्ष 2015 में दिल्ली उच्च न्यायालय में वैवाहिक बलात्कार को अपराध घोषित करने के लिए रिट याचिकाएँ फ़ाइल की गई थी। यह याचिकाएँ आर.ई.टी फाउंडेशन, ऑल इंडिया डेमोक्रेटिक वूमन एसोसिएशन तथा एक वैवाहिक बलात्कार पीड़िता द्वारा फ़ाइल की गई थी। इसमें कहा गया था कि भारतीय दंड संहिता 375 की धारा में दिए गए उस अपवाद को असंवैधानिक घोषित किया जाए जिसमें यह प्रावधान है कि 'एक पुरुष द्वारा अपनी पत्नी के साथ यौन संबंध बलात्कार नहीं होगा यदि पत्नी की आयु 18 वर्ष से कम नहीं है, याचिकाकर्ताओं द्वारा यह कहा गया है कि क़ानून की धारा में दर्ज़ यह अपवाद अनिवार्य रूप से एक पति को वैवाहिक बलात्कार की अनुमति देता है।'

इन याचिकाओं का विरोध किया था मैन वेलफेयर ट्रस्ट नाम की एक संस्था ने जिसने कहा था कि पति-पत्नी में यौन संबंध को ग़ैर-वैवाहिक यौन संबंधों की दृष्टि से नहीं देखा जा सकता। वर्ष 2017 में दिल्ली उच्च न्यायालय के नोटिस के उतर में केंद्र सरकार ने अपने शपथ-पत्र में कहा कि वैवाहिक बलात्कार को अपराध की श्रेणी में लाने से विवाह संस्था को ख़तरा पैदा हो जाएगा और इस पर ऐसा करने से पतियों को सताने का यह एक साधन बन जाएगा।

इस मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय में वर्ष 2020 से ही सुनवाई शुरू हो गई थी। केंद्र सरकार ने एक और शपथ-पत्र दाख़िल कर कहा था कि वह इस मामले में राज्य सरकारों सहित सभी पक्षों से सलाह कर उच्च न्यायालय को इस मामले में सहायता दे सकती है क्योंकि यदि सभी संबद्ध पक्षों से सलाह मशवरा न किया गया तो किसी-न-किसी पक्ष के साथ उससे अन्याय होने की संभावना बनी रहेगी। उस समय केंद्र सरकार के सॉलिसिटर जनरल तुषार मेहता ने कहा था कि इस मामले में समग्र दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है क्योंकि यह एक संवेदनशील सामाजिक-विधिक मुद्दा है।

1 फरवरी, 2022 को केंद्र सरकार ने कहा कि वह इस मामले पर पुनःविचार कर रही है और उसे अपना उतर फ़ाइल करने के लिए कुछ और समय दे दिया जाए। उच्च न्यायालय ने केंद्र सरकार को 2 सप्ताह का समय दे दिया किंतु जब केंद्र सरकार ने न्यायालय से पुनः और समय माँगा तो न्यायालय ने उसके अनुरोध को ठुकरा दिया और अब तक दोनों पक्षों की दलीलों के आधार पर अपना फ़ैसला सुरक्षित रख लिया।

तत्पश्चात्, 1 मई, 2022 को दिल्ली उच्च न्यायालय की दो-सदस्यीय खंडपीठ ने एक विभाजित फ़ैसला सुनाया। इस खंडपीठ के एक न्यायाधीश न्यायमूर्ति राजीव शक्धर ने कहा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 375 के अंतर्गत दिया गया अपवाद असंवैधानिक है जबकि खंडपीठ के दूसरे न्यायधीश न्यायमूर्ति श्री सी. हरिशंकर ने कहा कि यह प्रावधान असंवैधानिक नहीं, वैध है।

वर्तमान में विश्व के लगभग 100 से अधिक देशों में वैवाहिक बलात्कार को अपराध घोषित किया गया है, परंतु दुर्भाग्य से भारत विश्व के उन 36 देशों में से एक है जहाँ वैवाहिक बलात्कार को आज भी अपराध की श्रेणी में नहीं रखा गया है। जैसे कि ऊपर उल्लेख किया गया है कि महिलाओं के अधिकारों की रक्षा के लिए आपराधिक क़ानूनों में कई बड़े संशोधन किए गए हैं परंतु वैवाहिक बलात्कार का अपराध की श्रेणी में न होना महिलाओं की गरिमा और उनके मानवाधिकारों का अवमूल्यन करता है।

वर्ष 1860 के दशक में जब IPC का मसौदा तैयार किया गया था, उस समय तक एक विवाहित महिला को स्वतंत्र क़ानूनी इकाई नहीं माना जाता था। IPC के तहत बलात्कार की परिभाषा के वैवाहिक अपवाद को विक्टोरियन युग के पितृसत्तात्मक मानदंडों के आधार पर तैयार किया गया था जो पुरुषों व महिलाओं को बराबरी के रूप में मान्यता नहीं देता था और न ही विवाहित महिलाओं को संपत्ति के स्वामित्त्व की अनुमति देता था तथा इसमें पति-आश्रय (कोवर्चर) के सिद्धांत के तहत पति एवं पत्नी की पहचान का विलय कर दिया गया था। किंतु अब समय और सोच बदल चुकी है और वैसे औपनिवेशिक गुलामी काल के बने क़ानून को जारी रखने का कोई औचित्य नहीं है।

**भारत में वैवाहिक बलात्कार की स्थिति**

भारतीय दंड संहिता (IPC) की धारा 375 के तहत निर्धारित बलात्कार की परिभाषा में एक महिला के साथ ग़ैर-सहमति संभोग से जुड़े सभी प्रकार के यौन हमलों को शामिल किया गया है। भारत में वैवाहिक बलात्कार का ग़ैर-अपराधीकरण भारतीय दंड संहिता  की धारा 375 के अपवाद (Exception) 2 से संबंधित है। भारतीय दंड संहिता की धारा 375 के अपवाद 2 के तहत अठारह वर्ष  से अधिक की आयु के पति और पत्नी के बीच अनैच्छिक यौन संबंधों को धारा 375 के तहत निर्धारित 'बलात्कार' की परिभाषा से बाहर रखा गया है। पहले यह आयु पंद्रह वर्ष थी जिसे उच्चतम न्यायालय ने वर्ष 2017 में बढ़ा कर अठारह वर्ष कर दिया था।

अब तक देश के कुछ न्यायालयों में और उच्चतम न्यायालय में कुछ मामलों की सुनवाई में यही कहा गया है कि बलपूर्वक किया गया यौन सहवास संविधान के अनुच्छेद-21 के तहत प्राप्त मौलिक अधिकार का उल्लंघन है। अब मेरिटल रेप (Marital Rape) को अपराध घोषित करने को लेकर उच्चतम न्यायालय में एक याचिका दाख़िल की गई है। यह याचिका एक महिला ख़ुशबू सैफी ने दिल्ली हाईकोर्ट के 11 मई, 2022 उस विभाजित निर्णय के ख़िलाफ़ दायर की है जिसमें मेरिटल रेप मामले पर हाईकोर्ट ने 11 मई, 2022 निर्णय सुनाया था। हाईकोर्ट की दो जजों की बेंच ने मेरिटल रेप को अपराध घोषित करने के संबंध में दो अलग-अलग विचार प्रकट किए थे। जिसके बाद बेंच ने ये मामला सुप्रीम कोर्ट को ट्रांसफर कर दिया था। अब यह मामला उच्चतम न्यायालय में है और समय बतायेगा कि इस पर निर्णय आने में अभी कितने वर्ष लगेंगे?

❑

प्रभात सिंह भारती

# अमृत महोत्सव और एक आजादी ऐसी भी हो

मैं भारत हूँ, अमृत स्वरूपा गंगा मेरी माता हैं। मुझे वेदों की ऋचाओं ने जन्मा है। ऋषियों के आश्रय में पला हूँ, युगपुरुषों की ऊँगली थाम कर चला हूँ और संघर्षों की प्रचंड अग्नि में जला हूँ, हाँ, मैं भारत हूँ!

देखो? ओर पहचानो हमें, हम 'भारत' हैं वही भारत जो आज से 76 वर्ष पूर्व 'रुई' उपजाता था मगर आज 'रॉकेट' बनता है, तो आओ अपने हाथों से अपनी किस्मत लिखो, आज़ादी के अमृत महोत्सव में नए इतिहास की इबारत लिखो, उपलब्धियों के मानचित्र पर अपने खून-पसीने से 'भारत' लिखो...!

नमस्कार, वंदनम्, अभिनंदनम् आप सभी भरतवंशियों का आज़ादी की 76वें वर्षगाँठ व 76वें सफलतम् साल की नूतन बेला में 'सु-स्वागतम्'! रास्ट्र के नए साल का आगाज़ होने जा रहा है, और ये आगाज़ दिन-ए-आज़ादी के कुछ मतवालों की शहादत से शुरू होता है, जिनके अतुल्य योगदानों ने 'दामने-रास्ट्र' में वो अजिमोंशान, आफताब और महताब ने हासिल किया है, जो राष्ट्र के लिए 'रौशने-खिदमत', जुरत, बहादुरी और 'अदलो-इंसाफ' पर अपने शानदार, किरदार और कारनामों से प्रेरणादायक के पात्र रहे हैं, जिनके अदम्य साहस, पराक्रम और तपन से आज भी भारत चमकदार और रौशन है...! गीता में कमलनयन श्री कृष्ण कहते हैं कि ''स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः'' (अर्थात धर्म और राष्ट्र के लिए मर-मिटने से बड़ा कोई श्रेय नहीं है), श्री कृष्ण के ये शब्द भारत माता के कुछ वीर-वीरांगनाओं ने न केवल साबित किए वरन् राष्ट्र हेतु अपना सर्वोच्च बलिदान कर गया और अंततः वो दिन भी आया जब इनका रक्त रंग लाया। तभी खुले नभ के नीचे, समूचे चर-अचर को साक्षी मान रात्रि के मध्य भाग में रेडियो पर एक घोषणा-पत्र पढ़ा गया, 'पंडित नेहरू' के वो शब्द... ''At the stroke of the midnight hour, when the world sleeps, India will awake to life and freedom''. बस फिर क्या था पूरे प्रांत में खुशियों का सैलाब आया; और होता भी क्यों न, दरअसल आज़ादी का मतलब केवल वही समझ सकता है जिसने कभी गुलामी की हो। पहली बार खुशियों की ऋतु आई थी। जब प्रकृति ने मंगल गीत गाया था! परंतु दुःख की बात ये है कि हम इसकी गरिमा बरकरार नहीं रख सके! आज हम सब के लिए एक प्रश्नचिह्न बन कर खड़ा है, कहता जो है बहुत जोर से बरस रहे हैं बादल आज मेरे शहर में, उस पार जरूर कोई मासूम बिलख रहा होगा!'' आज देश की आर्थिक स्थिति ऐसी है कि लोग

जीवीकोपार्जन के लिए सड़कों पर उतर रहे हैं, वे विवश हैं क्यूँकि उनके घर में छोटे-छोटे बेटे व बेटियाँ हैं, घर की जिम्मेदारियाँ हैं, अगर ऐसा न करें तो भूखों मरें। आज़ादी के बाद जिन क्षेत्रों में सबसे अधिक काम किया जाना चाहिए था वो थी, देश की आर्थिक स्थिति, गरीबी, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार। लोकतंत्र के प्राँगण में अनेकों महान् विभूतियो ने शपथ-पत्र पढ़े और सभी के शब्द लगभग एक जैसे ही थे, परंतु दुःख की बात यह है कि जिसके लिए जनता ने चुना वही नहीं हुआ। युवाओं का देश भारत, जहाँ युवा की ऐसी मार्मिक स्थिति, जहाँ लोग दफ्तरों के चक्कर काट-काट कर पैरों के जूते घिस गए। लेकिन नौकरी न मिल पाया। ''हाय जिसके लिए की थी पढ़ाई, माँ के कंगन, बहन की राखी और झोंक दी बाप की कमाई; उसी ने सपनों में आग लगाई..., बेरोजगारी का ऐसा आलम हुआ और पेट की भूख ने धूल चटाई।''

जीवनयापन का सवाल लिए देखो गाँव शहर में आया। समय कम जरूरतें ज्यादा थीं 10-12 घंटे की नौकरी भी कम पड़ आई। भ्रष्टाचार यहाँ से जन्म है लेता किसने मासूमों के पेट में आग लगाई। कुछ नहीं और कुछ नहीं आज़ाद भारत में हम गुलाम हैं भाई! भारतीय जाँच एजेंसी के आँकड़ों की बात करें तो बेरोजगारी दर 8.6, भुखमरी/गरीबी दुनिया में भारत का 85वाँ, तो वही भ्रष्टाचार 101वाँ स्थान के साथ शीर्ष पर है, जो हम सब के लिए एक जोरदार तमाचे से कम नहीं है। भारतीय सभ्यता तो उस दिन शर्मसार हो जाती है जब 'विश्व बैंक' और अंतरराष्ट्रीय सूचना एजेंसी टेलीविज़न और अख़बारों में ये लिखते हैं कि भारत अब सुरक्षित नहीं, तब जाकर हमारी मर्यादा मैली होती है, तब उन क्रांतिवीरों की दिवंगत आत्मा कलंकित होती है! बेरोजगारी, भुखमरी, भ्रष्टाचार ये केवल हमारी और आपकी विवशता नहीं है और न ही ये आज का विषय-वस्तु है वरन् समूचे संसार के लिए नासूर बन गई है बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, गरीबी। पहले का भारत और था और अब कुछ और है, तब के लोग ये मानते थे कि एक खुशहाल जीवन के लिए केवल रोटी, कपड़ा, मकान पर्याप्त है। लेकिन आज इन सभी चीजों के अलावा कई ऐसी चीजें भी हैं जिसके बिना एक समृद्ध जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है। जरूरत है एक बड़े बदलाव की। निःसंदेह ये एक प्रबल चुनौती है उन देशों के लिए जो समय रहते समाधान न करेगा। हालाँकि भारत में ऐसे कई सत्ताधीश भी हुए हैं जिन्होंने इस सब के खिलाफ रुचि दिखाई है, और कुछ हद तक सफल भी हुए हैं तो दूसरी तरफ कुछ ऐसे भी हुए जिन्होंने सत्ता से ज्यादा सरकार को महत्त्व दिया है। एक तरफ गरीबी से हाल-बदहाल मुश्किलें अपार, ऊपर से इंदिरा गांधी की सरकार। इतिहास उस काले धब्बे को कैसे मिटा सकेगी, जो लोकतंत्र में लोगों द्वारा चयनित एक महत्त्वाकांक्षी मेघावी प्रधानमंत्री 'इंदिरा गाँधी' जिनकी तानाशाही के क्रोधाग्नि में सारा देश जला। देश हरदम लुटा है कभी किसी के महत्त्वाकांक्षाओं पर तो कभी उनकी भावनाओं पर...! उसके बाद के कालखंड में भारत विकासशील था। हमारी वर्तमान सरकार ने जो नीतियों व योजनाओं से काम कर रही हैं उसके लिए वे प्रशंसा के पात्र हैं। लेकिन ये तब तक संभव न होगा जब तक हम सभी देशवासियों का योगदान सम्मिलित न होगा। क्योंकि कोई देश अपने आप महान नहीं

बनता उसे महान् बनाते हैं उसके  नागरिक, वहाँ की राजकीय व्यवस्था...! कुछ लोगों का मानना है कि जनसंख्या दिनों-दिन बढ़ रही बेरोजगारी आदि के लिए जिम्मेदार है, जो कि एक हद तक सही भी है, लेकिन इस सब के साथ-साथ जो सबसे बड़ी और सबसे जटिल समस्या है जो मुझे दिख रही हैं, वो हैं अशिक्षा, क्योंकि राष्ट्र निर्माण के लिए ज्ञान का होना आपेक्षित है, जब हम और हमारे बच्चे राजकीय विधालयों में 'मिड-डे-मील' के लिए नहीं बल्कि शिक्षा ग्रहण करने के लिए स्कूल के चौखट चूमेगी, उसे कपड़ा नहीं बल्कि कलम और किताबें दी जाएँगी तब ज्ञान का सृजन होगा, क्योंकि शिक्षा ही एक मात्र साधन है जागरूकता का। जब तक समाज के बुद्धिजीवी वर्ग घर में बेरोजगार बैठे हैं और धनवान सरकारी दफ्तरों में, तब तक बाधाएँ आएँगी। जब तक शासन द्वारा मनोनीत मुलाजिम या ये कहे सपनों के सौदागर रिश्वतखोरी छोड़ निष्पक्ष भाव से धनवान को नहीं प्रतिभावान का चुनाव करेगा, तब संभव होगा राष्ट्र निर्माण! दूसरी व सबसे जरूरी, समाज में संसाधनों की उपलब्धता,  क्योंकि भरा हुआ पेट कभी चोरी नहीं करता, हमें ये सोचना है कि कैसे इस भुखमरी जैसी महामारी से निपटना है, जब बाजार की जरूरतें व्यापक होंगी, तो हम भ्रष्टाचार पर काबू पा सकेंगे और इसके लिए जो मेरा सुझाव है, वो बड़े पैमाने पर 'कल-करखानों' को पुनःस्थापित करना, ताकि लोगों को रोजगार दिया जा सके, लोगों का एक राज्य से दूसरे राज्य और एक देश से दूसरे देश में पलायन जारी है, इसे रोकना होगा, आज हमारे देश की सच्चाई है कि लोग यहाँ काम करना नहीं चाहते कारण मजदूरों का शोषण, कम मजदूरी तथा 'भाई-भतीजावाद', और न ही कोई नेशनल और इंटरनेशनल कंपनी यहाँ जमाना चाहता है, क्योंकि अच्छी सुविधाओं की कमी, जैसे पर्याप्त मात्राा में कच्चे माल आदि की आवश्यकता, सही बिजली, स्पेशल रोडवेज, ताकि बिना किसी बाधा के जल्दी से चीजों का आदान-प्रदान हो सकें, सुलभ यातायात की सुविधा आदि मुहैया करना, ताकि विकट परिस्थितियों में कंपनी के बजट बरकरार रखा जा सके आदि! आज भी हम और हमारे यहाँ की कंपनियाँ निर्यात की पद्धति में बहुत ही पीछे हैं, हमें उत्पादन क्षमता बढ़ानी होगी तथा इनका आधुनिकरण करना होगा! इन सभी के साथ कृषि पर विशेष ध्यान देना होगा, क्युँकि भारत एक कृषि प्रधान देश है। किसान जो 'खून-पसीने' से धरती के छाती चीर कर अन्न उगाता है, उसे सही मूल्य मिलना चाहिए। सरकार ने तकनीक अपना कर घूसखोरी कम की है। समाज का हर वर्ग इससे लाभांवित हुआ है। ऐसे ही नई-नई योजना और नई तकनीक को अमल में लाना होगा, व्यक्ति से समाज, समाज से राज्य एवं राज्य से राष्ट्र का एकीकरण आवश्यक है तथा 'सबका साथ-सबका विकास' के साथ चलना होगा, तब एक नए और ऊर्जावान भारत का निर्माण कर सकेंगे। आओ हम सब इस आज़ादी की 76वीं वर्षगाँठ के शुभ लगन में एक संकल्प लें, एक ऐसा भारत बनाने की जो खुशहाल होगा, बेमिसाल होगा। एक ऐसा भारत जो आज़ाद होगा, आबाद होगा, और जिंदाबाद होगा...!

❑

डॉ. मुकेश कुमार मालवीय

# भारत में अस्पृश्यता की समस्या एवं निवारण के लिए सुझाव

समाज का वह वर्ग जो अपने कार्यों से नहीं बल्कि जन्म के कारण निम्न वर्ग का है तथा जो अस्पृश्य (अछूत) हैं, यही वर्ग पहले 'बहिष्कृत जाति' और बाद में महात्मा गांधी के प्रयासों के परिणामस्वरूप 'हरिजन' कहलाया। महात्मा गांधी ने उन सभी उपजातियों को, जिन्हें शूद्र वर्ण के अंतर्गत समाज में दलित स्थान प्राप्त था, हरिजनों के नाम से पुकारा। परंतु कुछ समय बाद इन जातियों के लिए 'अनुसूचित जाति' शब्द का प्रचलन हो गया। वास्तव में, इन्हें अनूसूचित जातियाँ इसलिए कहा जाता है क्योंकि इन जातियों को संविधान की अनुसूची में सुविधाएँ प्रदान करने के लिए सम्मिलित किया गया है। संविधान की धारा 341 के अनुसार राष्ट्रपति को इस बात का अधिकार है कि वह विशिष्ट राज्यों के राज्यपाल के परामर्श से एक आज्ञा-पत्र द्वारा यह सूचित कर सकता है कि कौन-सी जातियाँ, प्रजातियाँ या जनजातियों के कौन-से भाग या वर्ग इस संविधान के लिए उस राज्य से संबंधित अनुसूचित जातियाँ समझी जाएँगी।

अस्पृश्यता का अर्थ अछूत है अर्थात् जो छूने योग्य नहीं है वह अस्पृश्य है। अस्पृश्यता पवित्राता की धारणा से जुड़ी हुई है क्योंकि अस्पृश्य जातियों को अपवित्रा माना जाता है। ऐसा समझा जाता है कि अगर कोई अस्पृश्य किसी स्वर्ण हिंदू को छू देता है तो वह भी अपवित्रा हो जाता है और उसे पुनः पवित्रा होने के लिए संस्कार करने पड़ते हैं। इसे इस प्रकार से परिभाषित किया गया है -- मजूमदार के अनुसार, ''अस्पृश्य जातियाँ वे समूह हैं जो अनेक सामाजिक व राजनीतिक निर्योग्यताओं का शिकार हैं, इनमें से अनेक निर्योग्यताएँ उच्च जातियों द्वारा परंपरागत तौर पर निर्धारित और सामाजिक दृष्टि से लागू की गई हैं।'' घुरिये के अनुसार, ''अनुसूचित जातियाँ वे समूह हैं जिनका कि नाम एक विशेष समय पर लागू अनुसूचित जाति-क्रम के अंतर्गत आता है।'' शर्मा के अनुसार, ''अस्पृश्य जातियाँ वे हैं जिनके स्पर्श से एक व्यक्ति अपवित्रा हो जाए और उसे पवित्रा होने के लिए कुछ कृत्य करने पड़े।''

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् सरकार ने वैधानिक रूप से अस्पृश्यता एवं अस्पृश्यों की सभी निर्योग्यताओं को समाप्त कर दिया है तथा इसमें काफी सीमा तक सफलता भी मिली है। के. एम. पाणिक्कर के मतानुसार, ''यह मान लेना सर्वथा अनुचित होगा कि अस्पृश्यता समाप्त हो जाने की घोषणा कर देने से ही अस्पृश्यों की सामाजिक निर्योग्यताएँ समाप्त हो गई हैं।'' यह कथन काफी सीमा तक ठीक भी है क्योंकि व्यावहारिक जीवन में ये निर्योग्यताएँ आज भी कुछ सीमा में देखी जा सकती हैं। ग्रामीण समाज में परंपरा का बोलबाला होने के कारण

अस्पृश्यों के साथ कुछ निर्योग्यताएँ आज भी देखी जा सकती हैं। अस्पृश्यों को समाज में निम्नवत् निर्योग्यताओं का शिकार होना पड़ता है --

(1) **धार्मिक निर्योग्यताएँ :** क्योंकि अस्पृश्यता पवित्राता-अपवित्राता के विचारों से जुड़ी हुई है, इसलिए धार्मिक दृष्टि से अस्पृश्यों की अनेक धार्मिक निर्योग्यताएँ थीं। ये लोग हिंदुओं के मंदिरों में प्रवेश नहीं कर सकते थे, वेदों का अध्ययन व मंत्रोच्चारण नहीं कर सकते थे तथा हिंदू ग्रंथों के उपदेशों को सुनना तक इनके लिए पाप समझा जाता था। प्राचीन समय में ऐसे उदाहरण भी मिलते हैं जिनके अनुसार अगर कोई शूद्र मंत्रोच्चारण करता था तो उसकी जीभ काट दी जाती थी। परंतु अब ये धार्मिक निर्योग्यताएँ लगभग समाप्त हो गई हैं।

(2) **राजनीतिक निर्योग्ताएँ :** यद्यपि अस्पृश्यों के साथ मुख्य रूप से धार्मिक, सामाजिक तथा आर्थिक निर्योग्यताएँ ही जुड़ी हुई थीं, फिर भी अस्पृश्यों की कुछ राजनीतिक निर्योग्ताओं का भी उल्लेख मिलता है। उनको राय देने का अधिकार नहीं था तथा नौकरी में नियुक्ति एवं वेतन संबंधी समान अधिकार नहीं थे। वोट देने तथा शिक्षा प्राप्त करने के अधिकारों से भी इन्हें वंचित रखा जाता था, परंतु आज अधिकांश राजनीतिक निर्योग्यताएँ समाप्त हो चुकी है।

(3) **सामाजिक निर्योयताएँ :** सामाजिक क्षेत्रा में अस्पृश्य जातियों की अनेक सामाजिक निर्योग्यताएँ थीं --

  (i) **समाज में निम्नतम स्थिति :** अस्पृश्यता की भावना के कारण इन लोगों को निम्नतम स्थिति प्रदान की गई। ऊँची जातियों के लोग अस्पृश्यों को घृणा की दृष्टि से देखते थे। इन लोगों के स्पर्श होने पर ऊँची जाति के व्यक्ति अपने को अपवित्रा समझते थे तथा पुनः पवित्रा होने के लिए संस्कार करते थे। यहीं तक ही नहीं, बल्कि कहीं-कहीं तो इनकी छाया का पड़ना भी अपवित्रा माना जाता था।

  (ii) **शिक्षा संबंधी निर्योग्यताएँ :** अस्पृश्यों की शिक्षा संबंधी भी निर्योग्यताएँ थीं। अस्पृश्य जातियों के बच्चे उन स्कूलों में नहीं पढ़ सकते थे जहाँ ऊँची जातियों के बच्चे शिक्षा प्राप्त करते थे। प्राचीन समय में ब्राह्मण गुरु इनके बच्चों को शिष्य बनाना अपनी मान-हानि एवं धर्म के विरुद्ध समझता था। इसका यह परिणाम था कि अछूत लोग प्रायः शत-प्रतिशत अशिक्षित होते थे।

  (iii) **अन्य प्रकार की सामाजिक निर्योग्यताएँ :** कहीं-कहीं पर अस्पृश्यों को अपनी इच्छानुसार जेवर आदि पहनने की भी सामाजिक अनुमति नहीं थी।

(4) **आर्थिक निर्योग्याताएँ :** कोई भी समाज, व्यक्ति, समूह या राष्ट्र तब तक उन्नति नहीं कर सकता है जब तक कि उसकी आर्थिक स्थिति ठीक न हो। अस्पृश्यों के पिछड़े होने का मुख्य कारण उनकी आर्थिक हीनता रही हैं। इनकी प्रमुख आर्थिक निर्योग्यताएँ निम्नांकित थीं --

(i) **इच्छानुसार पेशे चुनने का अभाव :** प्रत्येक जाति का एक निश्चित व्यवसाय से संबंध होता था। व्यवसाय के आधार पर जाति की सामाजिक स्थिति निर्धारित होती थी। अस्पृश्य केवल निम्नतम श्रेणी के व्यवसाय ही कर सकते थे तथा उनको अपनी इच्छानुसार व्यवसाय चुनने की अनुमति नहीं थी। इस कारण इनकी आर्थिक दिशा कालांतर में और भी दयनीय हो गई।

(ii) **भूमिहीन श्रमिक :** खेती करना ऊँची जातियों का ही अधिकारी माना जाता रहा है। इसके फलस्वरूप अस्पृश्य लोग अधिकतर भूमिहीन लोग ही थे। यदि ऊँची जाति के लोग इनको खेती में काम में नौकरी दे देते थे तो वे इसे अपना सौभाग्य समझते थे। अस्पृश्य लोगों को खेती में श्रमिक बनाकर इनसे बेगार भी ली जाती थी। अब भी इन जातियों के अधिकांश लोगों के पास अपनी भूमि नहीं है। वे या तो बटाई पर खेती करते थे या दूसरे के खेतों में मज़दूरी करते थे।

(iii) **सबसे कम वेतन :** उच्च श्रेणी के व्यवसाय करने की अनुमति न होने के कारण अस्पृश्यों को अपने परंपरागत निम्न व्यवसाय ही करने पड़ते थे। इनके व्यवसाय समाज में सबसे अधिक महत्वपूर्ण थे किंतु इनको वेतन सबसे कम मिलता था। गांधी के शब्दों में, ''यदि एक डॉक्टर अपनी डॉक्टरी छोड़ दे तो उसके रोगी का सर्वनाश हो जाएगा, किंतु यदि अछूत अपना काम बंद कर दे तो जगत का विनाश हो जाएगा।'' जजमानी व्यवस्था में सबसे कम आर्थिक लाभ अस्पृश्य जातियों को ही था।

(5) **सार्वजनिक निर्योग्यताएँ :** अपवित्रा समझे जाने के कारण अनुसूचित जातियों को सार्वजनिक स्थानों का प्रयोग नहीं करने दिया जाता था। उच्च जातियों के कुओं के पास तक आना इनके लिए निषेध था। यहीं तक नहीं, बल्कि इनकों सड़क पर घूमना भी मना था। पेशवाओं की राजधानी पूना में अछूतों के लिए राजाज्ञा थी कि वह अपने साथ एक मिट्टी की हाँड़ी लटका कर चलें। यदि उनको थूकना होता तो उसी हाँडी में थूक सकते थे; सड़क पर नहीं। ये लोग दोपहर को ही सड़क पर चल सकते थे।

**निर्योग्यताओं के प्रमुख परिणाम**

अस्पृश्यों की निर्योग्यताओं से केवल वे लोग ही प्रभावित नहीं होते थे, परंतु संपूर्ण समाज पर इनका प्रभाव पड़ता था। निर्योग्यताओं के प्रमुख परिणाम निम्नलिखित रहे हैं --

(1) **धार्मिक परिणाम :** अस्पृश्यों की निर्योग्यताओं से हिंदू समाज पर बुरा प्रभाव पड़ा है क्योंकि अनेक अस्पृश्य जातियों के व्यक्तियों ने अपना धर्म परिवर्तन करना प्रारंभ कर दिया। ईसाई धर्म के प्रचार से बहुत से अस्पृश्य ईसाई बन गए तथा काफी लोग मुसलमान भी बन गए, क्योंकि ईसाई धर्म की भांति मुसलमानों में भी अस्पृश्यता नहीं।

(2) **सामाजिक एकता में बाधा :** यह सत्य है कि भारत आपसी भेदभाव के कारण पराधीन

हुआ। इससे देश की सामाजिक एकता में निरंतर बाधा पड़ती रही और इसका लाभ विदेशी उठाते रहे। एक ओर उच्च जातियों के हिंदू अस्पृश्यों को सदैव अपने से नीचा समझते रहे हैं और दूसरी ओर अस्पृश्य सदैव इन लोगों से अपने को अलग समझते रहे हैं। इसी कारण समाज में कभी एकता नहीं रही है।

(3) **आर्थिक असमानताएँ :** श्रम-विभाजन जाति के आधार पर होने के कारण अस्पृश्य जातियों के लोग केवल निम्न व्यवसाय ही कर सकते थे। इन लोगों को उच्च व्यवसायों को करने की अनुमति नहीं थी, खेती करने का अधिकार नहीं था और उन्हें अच्छी नौकरियाँ भी नहीं मिल सकती थीं। इस हेतु इनकी आय बहुत कम होती थी। ये लोग भर पेट खाना भी नहीं खा सकते थे। इसके फलस्वरूप समाज में आर्थिक असमानताएँ पैदा हुई और आज भी अनुसूचित जातियाँ आर्थिक दृष्टि से पिछड़ी हुई हैं।

(4) **राजनीतिक फूट :** अस्पृश्यों की निर्योग्यताओं से इनकी राजनीति पर भी गहरा प्रभाव पड़ा। अछूतों ने अपने को अलग-अलग मान कर अपने प्रथम मताधिकारों के लिए माँग की। सन् 1931 में डॉ. अंबेडकर ने ब्रिटिश सरकार से गोलमेज कांफ्रेंस के समय अछूतों के लिए पृथक् मताधिकार मी माँग की तथा इसमें उन्हें सफलता मिली परंतु गांधी जी के प्रयासों से उन्हें हिंदुओं का ही एक अंग समझा जाता रहा है।

(5) **स्वास्थ्य का नीचा स्तर :** घृणित पेशे करने के कारण इनके जीवन स्तर पर काफी प्रभाव पड़ता था। ये लोग शहरों तथा ग्रामों के मध्य सवर्ण हिंदुओं के बीच अपने मकान नहीं बना सकते थे। गंदी बस्तियों में रहने के फलस्वरूप इनके जीवन पर बुरा प्रभाव पड़ता रहा है।

(6) **अशिक्षा :** अस्पृश्य जातियों के व्यक्ति उच्च जाति के लोगों के साथ नहीं बैठ सकते थे जिसके कारण अस्पृश्यों के बच्चों को स्कूलों में प्रवेश नहीं दिया जाता था। ब्राह्मण लोग अस्पृश्यों को शिक्षा देना धर्म के विरुद्ध समझते थे। इस हेतु ये लोग प्रायः शत-प्रतिशत अशिक्षित होते थे तथा आज भी अनुसूचित जातियों में शिक्षा का स्तर उच्च जातियों की अपेक्षा काफी निम्न है।

स्वतंत्र भारत में संवैधानिक रूप से अस्पृश्यों को विभिन्न प्रकार के संरक्षण प्रदान किए गए हैं, किंतु इससे पूर्व उन्हें किसी भी प्रकार के राजनीतिक अधिकार प्राप्त नहीं थे।

**भारत में अस्पृश्यता निवारण**

अस्पृश्यता भारतीय समाज के लिए एक बहुत बड़ा कलंक रही है। इसीलिए इसके निवारण के लिए अनेक प्रयास किए गए हैं। आज औद्योगीकरण, नगरीकरण, लौकिकीकरण, प्रजातांत्रिक व्यवस्था, शिक्षा तथा अनेक ऐसे कारकों से जातीय दूरी कम हुई है तथा अस्पृश्यों के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ है। ऐसे लोगों की संख्या काफी हो गई है जो अस्पृश्यता को आमूल-चूल रूप में समाप्त करना चाहते है। स्वयं अनुसूचित जातियों में अपने अधिकारों के

प्रति जागरुकता में वृद्धि हुई है तथा स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् आरक्षण नीति एवं इनको उपलब्ध विशेष सुविधाओं के परिणामस्वरूप इनके सामाजिक-आर्थिक स्तर में भी सुधार हुआ है। अस्पृश्यता निवारण हेतु निम्न प्रयास किए गए हैं।

समाज-सुधारकों द्वारा समय-समय पर अस्पृश्यता के निवारण के लिए आंदोलन किए जाते रहे हैं। महात्मा बुद्ध, रामानुज, कबीर, सेन, चैतन्य, नानक, नामदेव, तुकाराम, रैदास आदि विद्वानों के नाम इन आंदोलनों से जुड़े हुए हैं। स्वयं अस्पृश्य जातियों द्वारा उन्नीसवीं शताब्दी मे दक्षिण में ऐसे आंदोलनों की शुरूआत की गई। श्री ज्योतिबा फूले एवं डॉ. अंबेडकर ने अस्पृश्यों को संगठित करके ऐसे आंदोलनों को आगे बढ़ाया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी अनेक संगठन, संघ व आश्रम अस्पृश्यता-निवारण तथा हरिजनोद्धार के कार्यों में लगे हुए हैं। इन सभी के प्रयासों को भी दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है --

अस्पृश्यता निवारण के प्रयासों में स्वयं अस्पृश्य जातियों द्वारा किए जाने वाले आंदोलनों का मुख्य स्थान है। उन्नीसवीं शताब्दी में दक्षिण में ऐसे आंदोलनों की शुरूआत हुई क्योंकि दक्षिण में अस्पृश्यों पर अधिक कुठाराघात किया जाता था। इस आंदोलन के अग्रणी नेता पूना के श्री ज्योतिबा फूले थे जिन्होंने 'सत्य-शोधन समाज' की स्थापना करके अस्पृश्यों को उनके अधिकार दिलाने का प्रयास किया। बाद में डॉ. अंबेडकर के नेतृत्व में यह आंदोलन आगे बढ़ा। सन् 1920 में इनके नेतृत्व में 'अखिल भारतीय दलित वर्ग संघ' एवं 'अखिल भारतीय दलित वर्ग फेडरेशन' स्थापित किए गए जिनके माध्यम से अस्पृश्यों के अधिकारों की आवाज़ उठाई गई। सन् 1931 में गोल मेज कांफ्रेंस में डॉक्टर अंबेडकर इन्हें पृथक् निर्वाचन की माँग को स्वीकार कराने में सफल हो गए, परंतु गांधी जी ने इन्हें हिंदुओं का ही अंग स्वीकार करते हुए अनशन प्रारंभ कर दिया। 30 दिसंबर, 1931 को बंबई में पं. मदनमोहन मालवीय की अध्यक्षता में एक विशाल सभा हुई और सन् 1932 में सारे देश में अस्पृश्यता-निवारण के लिए 'अखिल भारतीय सेवक संघ' की स्थापना की गई। इस संघ ने अस्पृश्यों को उनके अधिकार दिलाने के लिए 1,130 शिशु मंदिर 1,018 छात्राावास, 67 धर्मशालाएँ एवं 1,995 कुओं की व्यवस्था की जिससे अस्पृश्यता विरोधी प्रचार में भी तीव्रता आई।

अंग्रेज़ी शासनकाल में ही अस्पृश्यता निवारण के सरकारी प्रयास प्रारंभ हो गए थे। सन् 1920 में कांग्रेस ने अस्पृश्यता निवारण को अपने प्रयोग का एक महत्त्वपूर्ण अंग बनाया। सन् 1936 में कांग्रेस मंत्रिमंडलों की स्थापना के बाद इनकी अवस्था सुधारने के प्रयास शुरू किए गए। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् संविधान का निर्माण करते समय अस्पृश्यता-निवारण को सामने रखा गया जिसका परिणाम यह है कि हमारा संविधान किसी भी नागरिक के प्रति धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म-स्थान या अन्य किसी आधार पर कोई भेदभाव नहीं करता। अस्पृश्यों को सार्वजनिक संस्थाओं में प्रवेश की अनुमति, इनकी निर्योग्यताओं की समाप्ति तथा अस्पृश्यता को फैलाने या मानने वालों के लिए कठोर दंड की व्यवस्था की गई है। सन् 1955 में अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम पारित किया गया जिसमें निर्योग्यताओं का समाप्त कर अस्पृश्यता के लिए

कठोर दंड व्यवस्था रखी गई। इनके अतिरिक्त, इसके लिए अनेक कल्याण कार्यो से संबंधित योजनाएँ बनाई गई हैं, विधानमंडलों में इनको प्रतिनिधित्व दिया गया है तथा सरकारी नौकरियों में आरक्षण की सुविधाएँ प्रदान की गई हैं। इनकी आर्थिक दशा सुधारने के लिए इन्हें कुटीर उद्योगों की स्थापना व गृह निर्माण के लिए ऋण सुविधाएँ उपलब्ध करवायी गई हैं पंचवर्षीय योजनाओं में इनके कल्याण के लिए काफी पैसा ख़र्च किया जा रहा है।

### अस्पृश्यता-निवारण के लिए सुझाव

ग़ैर-सरकारी तथा सरकारी प्रयासों के परिणामस्वरूप अस्पृश्यता में कमी तो हुई है परंतु यह कुरीति पूरी तरह से समाप्त नहीं हो पाई है। अस्पृश्यता-निवारण के लिए कुछ प्रभावशाली सुझाव इस प्रकार है --

1. इन जातियों की आर्थिक दशा में सुधार के लिए और अधिक कदम उठाए जाने चाहिए।
2. शिक्षा सुविधाओं के साथ-साथ इन्हें अतिरिक्त कोचिंग सुविधाएँ प्रदान की जाएँ।
3. जो घृणा वाले निम्न पेशे हैं उनमें सुधार होना चाहिए।
4. अस्पृश्यता निवारण के लिए चलचित्रों, नाटकों, गीतों व लघुचित्रों द्वारा जनमत तैयार किया जाना चाहिए।
5. इन जातियों को अन्य लोगों के साथ रहने से संबंधित गृह-निर्माण नीति।
6. जाति व्यवस्था को समाप्त करके अस्पृश्यता समाप्त की जा सकती है।
7. इनके लिए प्रौढ़ शिक्षा की सुविधाएँ उपलब्ध कराई जानी चाहिए।
8. इन्हें स्वस्थ मनोरंजन की सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए।
9. इन्हें सरकार द्वारा सामाजिक सुरक्षा प्रदान की जानी चाहिए।
10. अंतर्जातीय विवाहों को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

❑

### संदर्भ

1. जे.एच. हट्टन, कास्ट इन इंडिया, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, लंदन, 1963
2. डॉ. के.एन. शर्मा, भारतीय समाज एवं संस्कृति, पृष्ठ 272
3. डी.एन. मजूमदार, रेस एंड कल्चर ऑफ इंडिया, बांबे, 1958, पृष्ठ 327
4. जी.एस. घूरिये, कास्ट, क्लाश एवं आकूपेशन, पृ. 219
5. अंबेडकर टुडे, लखनऊ, जून, नवंबर 2009
6. भारत, 2010, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2010, पृ. 15
7. मुकर्जी, आर.एन. अग्रवाल, भरत, समाजशास्त्रा, एस.बी.पी.डी. पब्लिकेशंस, आगरा, 2011-12, पृ. 40-42

## डॉ. सन्तोष खन्ना

# भारत माँ के वीर सेनानी : चंद्र शेखर आज़ाद

भारत इस समय अपनी स्वतंत्रता का अमृत महोत्सव मना रहा है। इस वर्ष 9 अगस्त को काकोरी ट्रेन एक्शन की जयंती भी रही है। वर्ष 1925 को स्वतंत्रता सेनानियों ने काकोरी रेल गाड़ी से ब्रिटिश सरकार के खजाने को लूटने का कार्य किया था क्योंकि उनकी सोच थी कि स्वतंत्रता संग्राम जारी रखने के लिए हथियारों की जरूरत थी और उसे खरीदने के लिए धन चाहिए था। हाल में ही उत्तर प्रदेश सरकार ने काकोरी कांड का नाम बदल कर काकोरी ट्रेन एक्शन कर दिया है। काकोरी ट्रेन एक्शन में राम प्रसाद बिस्मिल ने अशफाक उल्ला खान, चंद्रशेखर आज़ाद सहित 10 लोगों के साथ मिलकर हिस्सा लिया था। उनमें से राम प्रसाद बिस्मिल, अशफाक उल्ला खान, रोशन सिंह और राजेंद्र सिंह लाडी को फाँसी दी गई थी। उस समय चंद्रशेखर आज़ाद फरार होने में कामयाब हो गए थे और उन्होंने राम प्रसाद बिस्मिल द्वारा बनाए गए हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिक एसोसिएशन का कार्यभार संभाल लिया और वहीं से स्वतंत्रता संग्राम के लिए कई प्रकार की गतिविधियों को संपन्न करने लगे।

जब हम भारत के वीर सेनानी चंद्रशेखर आज़ाद को श्रद्धांजलि अर्पित कर रहे हैं तो मुझे आठवें दशक की उन दिनों की याद ताजा हो आती है जब मेरे बेटे और बहू अपने बच्चों के साथ प्रयागराज में जाकर रहने लगे थे। वहाँ वे दोनों एक बड़े अस्पताल में कार्यरत थे। मैं उन दिनों वहाँ उनके पास महीनों जा कर रहती थी। प्रयागराज में उनका आवास उस सड़क पर था जहाँ वहाँ का विशाल कंपनी बाग अर्थात् चंद्रशेखर आज़ाद पार्क था। इस कारण भी मुझे रोजाना चंद्रशेखर आज़ाद पार्क में सुबह सैर के लिए जाने का सुअवसर प्राप्त होता था और इस तरह रोज वहाँ आज़ाद पार्क में भारत माँ के उस महान स्वतंत्रता सेनानी चंद्रशेखर आज़ाद की विशाल प्रतिमा के दर्शन हो जाते थे। मुझे महसूस होता था कि वहाँ आ कर और उस प्रतिमा के समक्ष शीश झुका कर मानों एक बड़े तीर्थ स्थल पर जाना होता था। वहाँ प्रायः भारत भर से लोग उनके दर्शन को आते थे। वहीं मैंने उनकी उसी पार्क में हुई उनकी शहादत के बारे में विस्तार से पढ़ा और जाना था।

अब तो समूचा भारत और विश्व जानता है कि चंद्रशेखर आज़ाद एक बार जब प्रयागराज में आनंद भवन में जवाहरलाल नेहरू से भगत सिंह को हुई फाँसी की सज़ा रुकवाने के प्रयास के बारे में बात करने गए थे तो वे वहाँ से निकल कर इसी पार्क में आ गए थे क्योंकि आनंद भवन और चंद्रशेखर आज़ाद पार्क के बीच कोई विशेष दूरी नहीं है और स्वतंत्रता संग्राम

की गतिविधियों के बारे में अन्य साथियों के साथ चर्चा आदि प्रायः यहीं करते थे। स्वतंत्रता संग्राम की गतिविधियों में सक्रिय होने के कारण वह पुलिस के रडार पर थे और वे प्रायः भूमिगत रह कर गतिविधियों को अंजाम देते थे। जब वह अपने साथ राजगुरु के साथ तत्कालीन समय में कंपनी बाग नाम से जाने वाले उस पार्क में पहुँचे तो पुलिस को पता नहीं, उसकी कैसे भनक लग गई। अतः वहाँ पर अंग्रेजों की पुलिस ने उन्हें घेर लिया था। उन्होंने किसी तरह राजगुरु को वहाँ से बच निकलने में सहायता की और खुद अपना पिस्टल निकाल मोर्चा संभाल लिया। दोनों तरफ से गोलियाँ चली थीं। पुलिस से उस मुठभेड़ में जब चंद्रशेखर आज़ाद ने पाया कि पुलिस के साथ उस मुठभेड़ में अब उन के पास केवल एक ही गोली बची है, तो उस गोली को उन्होंने अपनी कनपटी पर रखा और ट्रिगर दबा दिया और इस तरह उस युवा सेनानी ने स्वयं को भारत माँ की बलि वेदी पर शहादत को गले लगा लिया था क्योंकि वह नहीं चाहते कि पुलिस उन्हें जिंदा पकड़े। उस समय वह मात्र 24 वर्ष के थे। चंद्र शेखर आज़ाद का वहीं पिस्टल आज़ाद पार्क में बने म्यूजियम में रखा है। यह बलिदान दिवस 7 फरवरी, 1931 को घटित हुआ था।

पुलिस में इस बेखौफ स्वतंत्रता सेनानी के प्रति इतना खौफ था कि जब चंद्रशेखर आज़ाद अपने द्वारा चलाई गोली से शहादत को गले लगा चुके थे तो भी पुलिस आधे घंटे तक उनके पास जाने का साहस नहीं जुटा पाई थी। उन्होंने उनकी शहीद हुई देह पर गोलियाँ चला यह सुनिश्चित किया कि वह शेर भारत माँ की गोद में चिर निद्रा में विलीन हो चुका है। कंपनी बाग में जीवन बलिदान के कारण ही इस पार्क का नाम बदल कर चंद्रशेखर आज़ाद पार्क किया जा चुका है।

चंद्र शेखर आज़ाद का जन्म 23 जुलाई, 1906 को मध्य प्रदेश में भाबरी गाँव, जिला अली राजपुर में हुआ था। आजकल इस गाँव का नाम भी आज़ादपुरा कर दिया गया है। उनके पिताश्री का नाम पंडित सीताराम तिवारी और माता का नाम जगरानी देवी था। उनकी माँ चाहती थी कि उनका बेटा संस्कृत का विद्वान बने परंतु चंद्र शेखर आज़ाद देश के स्वतंत्रता संग्राम में अपनी किशोरावस्था में ही कूद पड़े थे। जब वर्ष 1919 में अमृतसर के जलियाँवाला बाग नरसंहार ने देश के नवयुवकों को उद्वेलित कर दिया तब चंद्रशेखर उस समय पढ़ाई कर रहे थे। जब गांधीजी ने सन् 1920 में असहयोग आंदोलन का फरमान जारी किया तो वह आग ज्वालामुखी बनकर फट पड़ी और तमाम अन्य छात्रों की भाँति चंद्रशेखर भी सड़कों पर उतर आए। अपने विद्यालय के छात्रों के जत्थे के साथ इस आंदोलन में भाग लेने पर वे पहली बार गिरफ्तार हुए और उन्हें 15 बेतों की सज़ा मिली। इस घटना का उल्लेख पं. जवाहरलाल नेहरू ने क़ानून तोड़ने वाले एक छोटे-से लड़के की कहानी के रूप में किया है --

उन्होंने लिखा है कि ''ऐसे ही क़ानून तोड़ने के लिए एक छोटे-से लड़के को, जिसकी उम्र 14 या 15 साल की थी और जो अपने को आज़ाद कहता था, बेंत की सज़ा दी गई। उसे नंगा कर बेंत की टिकटी से बाँध दिया गया। जैसे-जैसे बेंत उस पर पड़ते थे और उसकी चमड़ी उधेड़ डालते थे, वह 'भारत माता की जय!' चिल्लाता था। हर बेंत के साथ वह लड़का

तब तक यही नारा लगाता रहा, जब तक वह बेहोश न हो गया। बाद में वही लड़का उत्तर भारत के क्रांतिकारी कार्यों के दल का एक बड़ा नेता बना।''

आरंभ में चंद्र शेखर आज़ाद महात्मा गांधी द्वारा चलाए जा रहे सत्याग्रह में हिस्सा ले रहे थे। एक बार पुलिस द्वारा पकड़े जाने पर पुलिस ने उन्हें मैजिस्ट्रेट के सामने पेश किया तो उसका नाम पूछे जाने पर उन्होंने मैजिस्ट्रेट को अपना नाम आज़ाद बताया और पिता का नाम स्वतंत्रता और आवास का पता जेल बताया। उसी केस में तब उन्हें पंद्रह कोड़े लगाए जाने का दंड मिला था। तभी से चंद्रशेखर तिवारी का नाम चंद्र शेखर आज़ाद पड़ गया था।

महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन के दौरान चौरी चौरा कांड के कारण महात्मा गांधी ने आंदोलन वापस लिया तो उनके इस कार्य से अधिकांश क्रांतिकारी उनसे बहुत नाराज हो गए। उनमें चंद्रशेखर आज़ाद भी थे। उसके बाद वह देश की स्वतंत्रता के लिए पूरी तरह अंग्रेजों के विरुद्ध क्रांतिकारी आंदोलन में कूद पड़े। उनके देश के प्रति उत्कठ प्रेम और शौर्य से देश के अनेक युवक प्रेरक हो स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने लगे। वह क्रांतिकारी भगत सिंह के सलाहकार थे।

17 दिसंबर, 1928 को चंद्रशेखर आज़ाद, भगत सिंह और राजगुरु ने संध्या के समय लाहौर में पुलिस अधीक्षक के दफ्तर को जा घेरा। ज्यों ही जे.पी. सांडर्स अपने अंगरक्षक के साथ मोटर साइकिल पर बैठकर निकला, पहली गोली राजगुरु ने दाग दी, जो साडंर्स के मस्तक पर लगी और वह मोटर साइकिल से नीचे गिर पड़ा। भगत सिंह ने आगे बढ़कर चार-छह गोलियाँ और दागकर उसे बिल्कुल ठंडा कर दिया। जब सांडर्स के अंग रक्षक ने पीछा किया तो चंद्रशेखर आज़ाद ने अपनी गोली से उसे भी समाप्त कर दिया। उसके बाद लाहौर नगर में जगह-जगह परचे चिपका दिए गए कि लाला लाजपतराय की मृत्यु का बदला ले लिया गया है। समस्त भारत में क्रांतिकारियों के इस कदम को सराहा गया। इसी प्रकार, भगत सिंह ने राज गुरु के साथ एसेंबली में बंबई फेंका था तो उसके पीछे भी चंद्रशेखर आज़ाद की योजना काम कर रही थी। चंद्र शेखर आज़ाद ने स्वतंत्रता आंदोलन के लिए घन की व्यवस्था करने के लिए भी कई प्रकार की गतिविधियों का आयोजन करते रहे थे।

चंद्र शेखर आज़ाद तत्कालीन वामपंथी विचारधारा से प्रभावित थे और समानता, समरसता और भाईचारे वाले समाज की स्थापना का स्वपन देख रहे थे। अतः वे न केवल महानायक क्रांतिकारी थे बल्कि आम आदमी के प्रति वे अत्यंत संवेदनशील थे। इस संबंध में उनके बारे में कई ऐसे उदाहरण सामने आते हैं जहाँ इस क्रांतिकारी वीर का का मानवता के प्रति प्रेम उजागर होता है। पुलिस को उनकी हमेशा तलाश रहती थी। एक बार की बात है कि वह पुलिस से छिपते-छिपाते एक तूफानी रात में शरण के लिए एक द्वार खटखटाते हैं और द्वार खोलती हैं एक विधवा महिला जो अपनी युवा बेटी के साथ उस घर में अकेली रहती है। पहले तो चंद्र शेखर आज़ाद को देख कर वह डर जाती है परंतु परिचय देने पर वह उन्हें शरण देने के लिए तैयार हो जाती है। उस घर में कुछ देर रुकने से चंद्रशेखर आज़ाद को उस परिवार की गरीबी का पता चलता है और यह भी पता चलता है कि वह माँ पैसा न होने के कारण

अपनी बेटी का विवाह नहीं कर पा रहीं हैं। यह जानकारी मिलने पर चंद्र शेखर आज़ाद उस माँ से कहते हैं कि पुलिस ने उन पर 5000/- रुपए का इनाम रखा है। यदि वह पुलिस को चंद्रशेखर आज़ाद के अपने घर में छिपे होने की सूचना दे देंगी तो उन्हें इनाम स्वरुप वह राशि मिल जाएगी जिससे वह अपनी बेटी का विवाह कर पाएँगी। चंद्र शेखर आज़ाद के मुँह से यह प्रस्ताव सुन कर उस माँ की आँखों में आँसू बह निकले और उसने रुँधे कंठ से कहा, ''भाईजी, आप भारत माँ की सुरक्षा के लिए अपनी जान हथेली पर लिए फिरते हैं, मैं यह पाप नहीं कर सकती, मैं भारत माँ के साथ गद्दारी नहीं कर सकती।'' तभी उसने एक धागा लेकर चंद्रशेखर आज़ाद की कलाई पर बाँधते हुए कहा, ''भाई, तुम भारत माँ की आज़ादी के लिए यूँ ही संघर्ष करते रहो। आप दीर्घायु हों।''

''सुबह सो कर वह माँ-बेटी उठी तो उससे पहले ही चंद्रशेखर आज़ाद वहाँ से जा चुके थे। उन्हें सिरहाने के नीचे पाँच हजार रुपयों के साथ एक पर्ची मिली, बेटी के विवाह के लिए एक भाई की तुच्छ भेंट।'' ऐसे था वीर सेनानी माँ भारती के दुलारे चंद्रशेखर आज़ाद का मानवीय पक्ष। ऐसे महामानव को शत्-शत् नमन, वंदन और अभिनंदन।

❑

**संदर्भ**

1. चंद्र शेखर आज़ाद की जीवनी

## छपते छपते...

उच्चतम न्यायालय ने 29 सितंबर, 2022 को महिला अधिकारों पर एक ऐतिहासिक फैसला दिया है कि महिला शादीशुदा हो या न हो, उसे अबॉर्शन कराने का अधिकार है। महिला की वैवाहिक स्थिति जो कुछ भी हो, उसे सुरक्षित और कानूनी तरीके से अबॉर्शन कराने का हक है। न्यायमूर्ति डी.वाई. चंद्रचूड़, न्यायमूर्ति जे.बी. पारदीवाला और न्यायमूर्ति ए.एस. बोपन्ना की पीठ ने अपने इस फैसले में ये भी कहा कि मेडिकल टर्मिनेशन ऑफ प्रेग्नेंसी कानून में विवाहित और अविवाहित महिला में अंतर नहीं किया गया है। इस फैसले का मतलब है कि अब अविवाहित महिलाओं को भी 24 हफ्ते तक अबॉर्शन का अधिकार मिल गया है।

अबॉर्शन पर फैसला देने के साथ ही उच्चतम न्यायालय ने 'मैरिटल रेप' का जिक्र भी किया। कोर्ट ने कहा कि पति का महिला पर यौन हमला 'रेप' का रूप ले सकता है और रेप की परिभाषा में मेडिकल टर्मिनेशन ऑफ प्रेग्नेंसी एक्ट के तहत 'मैरिटल रेप' शामिल होना चाहिए।

प्रो. मुक्ता त्रिपाठी

# बाल अपराध की समकालीन परिस्थितियाँ : एक संक्षिप्त विश्लेषण

आज जहाँ भारत में व्यक्ति पहले से शिक्षित और धनी हो गया है वह लाखों रुपए सामाजिक कार्य में लगा सकता है। अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा, अच्छी परवरिश और सुविधा देने की कोशिश करता है। इन सुख-सुविधाओं के कारण भारत में बाल अपराधों की संख्या बढ़ती जा रही है। बढ़ती संख्या के कारण भारत के हर एक व्यक्ति चाहे वह घर-परिवार के सदस्य हो या समाज सुधारक या फिर राज्य सरकार सभी इसी चिंता में है कि इस समस्या का समाधान कैसे किया जाए। किसी ने ठीक ही कहा है --

''बच्चों को बचपन की उड़ान दे दो
अपराध रोक उनके चेहरे पर मुस्कान दे दो।''

कोई भी इनसान जन्म से अपराधी नहीं होता। उसकी परिस्थिति उसे अपराधी बनने पर मज़बूर करती हैं। आधुनिक समय में बाल अपराधियों की बढ़ती संख्या सभी के लिए चिंता का विषय बना हुआ है। आज माता-पिता, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक कार्यकर्ता, अपराध शास्त्री, मीडिया आदि सभी इस विषय पर चर्चा करते पाए जा रहे हैं कि आखिर यह बाल अपराध क्यों बढ़े हैं इस पर काफी चर्चा, वाद विवाद और विश्लेषण भी हो चुके हैं, परंतु एक सही निष्कर्ष तक पहुँचना कठिन सा हो गया है।

**प्रस्तावना**

''उड़ने दो परिंदों को अभी शौख़ हवा में
फिर लौट के बचपन के जमाने नहीं आते।''

बचपन आपका हो या हमारा हर किसी को अपने बचपन की याद जरूर आती है। हर कोई चाहता है कि वह अपने बचपन में दोबारा चला जाए परंतु आज का बाल वर्ग जल्दी-जल्दी बड़ा होना चाहता है। वह सारे ऐशो-आराम पाना चाहता है चाहे उसके लिए उसे कोई भी रास्ता अपनाना पड़े। बचपन क्या है सही मायनों में आज के बाल वर्ग को पता ही नहीं है इसमें ग़लती उनकी नहीं सभी सामाजिक प्रवृत्तियों, एकल परिवार, सभी तो कारण है ही कुछ बीते हुए समय में कोरोना ने पूरी कसर निकाल दी बच्चों को स्कूलों से बाहर घर पर बिठाकर।

उनके हाथों में मोबाइल थमा दिया। माता पिता के पास समय न होने के कारण बच्चा अकेलापन का शिकार हो गया जिसके कारण बालकों का मन इन भौतिक वस्तुओं की तरफ आकर्षित होता चला गया। इसे मीडिया सोशल मीडिया को और बढ़ावा मिला बच्चों को नई-नई गेम खेलने की लत लग गई। इसके चलते कुछ बालकों के क्रोध और व्यवहार में इस तरह का परिवर्तन हुआ कि वह अपने माता-पिता का अपमान व क़त्ल करने से भी नहीं घबराए हालाँकि इस भरपाई के लिए माता-पिता बच्चों की हर छोटी-से-छोटी या बड़ी-से-बड़ी इच्छा को पूरा करने की कोशिश करते हैं, लेकिन बच्चे का अबोध मन अक्सर अपने रास्ते से भटक जाता है। बालक अपराधियों की संख्या भविष्य के लिए ख़तरे का संकेत है।

हालाँकि सरकार ने इस तरह के अपराधों के लिए काफी सारे क़ानून पारित किए हैं। जैसे किशोर न्याय (बच्चों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 के अनुसार अगर कोई बच्चा क़ानून के ख़िलाफ़ चला जाता है तो आम आरोपियों के तरह न्याय प्रक्रिया से गुजरने अथवा अपराधियों की तरह जेल, बाल गृहों में सुधार के लिए भेजा जाता है। हमारा क़ानून भी यह स्वीकार करता है कि किशोरों द्वारा किए अनुचित व्यवहार के लिए किशोर बालक स्वयं नहीं बल्कि उसकी परिस्थितियाँ उत्तरदाई होती हैं। हम किशोर अपराधियों को दंड नहीं उनकी केस हिस्ट्री जानने और उनके वातावरण का अध्ययन करने के बाद उन्हें सुधार गृह में रखा जाता है। दूषित हुए मानसिकता को सुधारने का प्रयास किया जा सकता है। उनके भीतर की नकारात्मकता ख़त्म करने की कोशिश की जा सकती है। नियमों के बावजूद भी ऐसे कई कारण है जिनकी वजह से आज भी घिनौने अपराध, बलात्कार, क़त्ल रूकने का नाम नहीं ले रहे हैं। इसका प्रमुख कारण है, बालकों में आधी-अधूरी जानकारी, सोशल मीडिया का ग़लत उपयोग करना।

**बाल अपराध का अर्थ**

- जब कोई व्यक्ति क़ानून का उल्लंघन प्रथम बार करता है अर्थात् उसमें अपराध का प्रारंभ ही हुआ है, तो उसे क़ानून की भाषा में 'ऑफेंडर' कहा जाता है। ऑफेंडर को हम अपनी भाषा में दोषी कह सकते हैं।
- जिस व्यक्ति में अपराध की प्रवृत्ति आ जाती है, उसे हम 'डेलिंकवेंट' कहते हैं। डेलिंकवेंट शब्द को हम संस्कृत गर्भित हिंदी में कदाचारी कह सकते हैं। इसमें अपराध की प्रवृत्ति के साथ-साथ अपराध की क्रिया भी होती है अर्थात् कदाचारी अपराध करता भी है।
- अपराधी की तीसरी श्रेणी आती है, जिसे अंग्रेज़ी में 'क्रिमिनल' कहते हैं। क्रिमिनल पूर्णरूपेण अपराधी होता है। इस प्रकार हम देख रहे हैं कि अपराधियों की तीन श्रेणियाँ हैं -- दोषी, कदाचारी एवं अपराधी। हमारा संबंध यहाँ पर दूसरी श्रेणी के अपराधियों से विशेष रूप से है।

भारतीय दंड सहिंता की धारा 82 के अंतर्गत यह बात स्पष्ट कर दी गई है कि जो बालक

सात वर्ष की आयु के नीचे है और अपराध करते हैं, उन्हें दोषी नहीं माना जा सकता है। सात वर्ष से नीचे की आयु के बालक अपने अपराधों के लिए स्वयं उत्तरदायी नहीं हैं। इसी संहिता की धारा 83 में इस आयु को 12 वर्ष तक कर दिया गया है। इस धारा में यह लिखा गया है कि जो बालक अपराध करते समय अपने कदाचार के परिणामों को समझने में असमर्थ है एवं जिनकी वृद्धि में अभी परिपक्वता नहीं आई है; वे यदि 12 वर्ष तक की आयु के भी हों, तो अपराध के दंड के लिए स्वयं भागी नहीं होंगे। क़ानून की भाषा में इस आयु को सुरक्षात्मक आयु कहा जाता है।

जब किसी बच्चे द्वारा कोई अनैतिक क़ानून या समाज विरोधी कार्य किया जाता है तो उसे बाल अपराध कहते हैं। बाल न्याय अधिनियम 1986 संशोधित 2000 के अनुसार 16 वर्ष तक की आयु के लड़के और 18 वर्ष तक की आयु की लड़कियों के अपराध करने पर अपराधी की श्रेणी में सम्मिलित किया गया है। बच्चे राष्ट्र की धरोहर हैं। लेकिन सामाजिक कमज़ोरियों, मानसिक रोग आज के भौतिकतवाद युग के चलते आर्थिक स्थिति के ख़राब होने की वजह से बच्चे इस प्रकार के घिनौने अपराध कर देते हैं--

हम बाल अपराध और बाल अपराधी से संबंधित कुछ परिभाषाएँ अंकित कर रहे हैं।

**वेलेंटाइन ः** मोटे तौर पर, बाल अपराध शब्द किसी क़ानून के भंग किए जाने का उल्लेख करता है।

**स्किनर ः** बाल अपराध की परिभाषा किसी क़ानून के उस उल्लंघन के रूप में की जाती है, जो किसी वयस्क द्वारा किए जाने पर अपराध होता है।

**क्लासमियर व गुडविन ः** बाल अपराधी वह बालक या युवक होता है, जो बार-बार उन कार्यों को करता है, जो अपराधों के रूप में दंडनीय हैं।

**बाल अपराधियों के सामान्य लक्षण और स्वभाव**

- जिद्दी, स्वार्थी, साहसी, बहिर्मुखी, अपराधी, विनाशकारी, आक्रमणकारी
- प्रेम, ज्ञान, नैतिकता और संवेगात्मक संतुलन से रहित
- संभोग में क्रूरता, व्यवहार में व्याकुलता और सामाजिक स्थिति प्राप्त करने की उत्सुकता
- शीघ्र क्रुद्ध होना, दूसरों का विरोध करना, दूसरों को चुनौती देना, दूसरों पर संदेह करना, समाज-विरोधी कार्य करना, अधिकारियों की आज्ञा न मानना, समस्या को उचित विधि से हल न करना।

**समुचित संतुलन का अभाव**

- इदम् • अहम् • पराहम्

**अन्य लक्षण ः**

गुमसुम, निराशा-हताश, विषाद ग्रस्त, नियम क़ानूनों का उल्लंघन करने वाला, अविश्वासी

प्रवृत्ति, उद्दंड, आज्ञा का उल्लंघन करने वाला, अनैतिक एवं चरित्राहीन व्यक्ति के साथ मित्राता, देर रात बाहर घूमना, तरसकरी आदि गैर-क़ानूनी धंधे, स्कूल और घर से भागने की आदत।

**बाल अपराध के कारण**

शारीरिक कारण; सांस्कृतिक कारण; विद्यालय संबंधी कारण पारिवारिक कारण; संवाद वाहन के साधन; आनुवंशिक कारण; सामाजिक कारण; मनोवैज्ञानिक कारण

**किशोर क़ानूनी प्रणाली के लिए तर्कसंगता**

इस बात पर बहुत बहस होती है कि क्या अपराध करते हुए पकड़े गए बच्चों और किशोरों को उतनी ही सज़ा भुगतनी चाहिए जितनी समान अपराध करने वाले एक वयस्क को मिलेगी। कुछ तर्क देते हैं कि किशोरों का मस्तिष्क पूरी तरह से विकसित नहीं होता है और इसलिए किशोर अपराध के लिए पूरी तरह से ज़िम्मेदार नहीं है। यह संभव है कि किशोर के अवरोधों का वैज्ञानिक, रासायनिक संबंध हो (कोरिएरो, 48)।

हालाँकि, ऐसे कई क्षेत्रा हैं जो असहमत हैं। कई राज्यों में एक छोटे बच्चे पर 13 साल की उम्र में मुक़दमा चलाया जा सकता है और उस पर 14 साल की उम्र में ही हत्या का मुक़दमा चलाया जा सकता है (कोरिएरो, 35)। उदाहरण के लिए, ओक्लाहोमा में, सात साल की उम्र के बच्चे को अपराधों के लिए जवाबदेह ठहराया जा सकता है, भले ही गंभीरता कितनी भी हो। यह कई राज्यों में अत्यधिक बहस योग्य है। एक ओर बच्चा व्यक्तिगत रूप से अपराध के लिए ज़िम्मेदार है। नतीजतन, उसे किसी और की तरह ही दंडित किया जाना चाहिए।

सभी राज्यों में युवाओं के ख़िलाफ़ काफी सख़्ती से मुक़दमा चलाया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में, अठारह वर्ष से कम उम्र के 200,000 युवा हैं जिन्हें वयस्कों के रूप में आजमाया जाता है। इस आँकड़ों में से, लगभग बारह प्रतिशत अपराधी सोलह वर्ष से कम आयु के हैं (कोरिएरो, 35)।

पुराने समय में, बच्चों को वयस्कों की तरह क्रूरता से दंडित किया जाता था। हालाँकि जैसे-जैसे समय आगे बढ़ा और मनोवैज्ञानिक अध्ययन गहराता गया, यह पता चला कि अधिकांश पारंपरिक क्रियाएँ अप्रभावी थीं। इसके स्थान पर, अधिक-से-अधिक चिंता अपराधियों के प्रति निर्देशित की जा रही थी। अपने आप में सज़ा के विरोध में, क़ैद करने वालों या अपराधियों की देखभाल करने वालों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि बच्चा अपने तरीकों की त्राुटि को देखे और सही और ग़लत के बीच के अंतरों का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त करें --

**1. परिवार :** अच्छा वातावरण, परिवार में वृद्धि पर नियंत्रण, बालकों का निर्देशन, बालकों का निरीक्षण, बालकों के प्रति उचित व्यवहार, बालकों के अध्ययन की व्यवस्था, बालकों की आवश्यकताओं की पूर्ति, बालकों के दैनिक व्यय की पूर्ति, बालकों में अच्छी आदतों का निर्माण, बालकों में आत्म निर्भरता का विकास।

**2. विद्यालय के कार्य :** उत्तम वातावरण (शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक और संवेगात्मक विकास), बालकों की स्वतंत्रता, व्यक्तिगत विभिन्नताओं का विकास, अच्छे पुस्तकालय की व्यवस्था, उपचारात्मक व व्यावसायिक कक्षाएँ, पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं की व्यवस्था, योग्य शिक्षकों की नियुक्ति (बालकों के प्रति प्रेम, सहानुभूति, नवीनतम शिक्षण विधियों और शिक्षण के उपकरणों के प्रयोग)

**3. समाज व राज्य के कार्य :** बालकों की राजनीति से पृथकता, मनोरंजन की व्यवस्था, निर्धन बालकों की आर्थिक सहायता, निर्धन परिवारों की आर्थिक स्थिति में सुधार, चलचित्रों पर नियंत्रण, गंदी बस्तियों की समाप्ति, सामूहिक संघों का निर्माण, गंदी बस्तियों की समाप्ति, अनैतिक कार्यों पर प्रतिबंध।

बाल अपराध का उपचार बाल-अपराध का उपचार करने के लिए दो प्रकार की विधियों का प्रयोग किया जा सकता है -- (1) **मनोवैज्ञानिक :** मनोविश्लेषण, मनो-अभिनय, खेल द्वारा चिकित्सा; और (2) **वैधानिक :** कारावास, किशोर न्यायालय, प्रवीक्षण, किशोर बंदीगृह, किशोर-सुधारगृह, बोस्टल संस्थाएँ।

**बाल अपराध अधिनियम**

- बाल अधिकार बिरादरी द्वारा इसके कई प्रावधानों पर तीव्र विवाद, बहस और विरोध के बीच भारत की संसद द्वारा किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015 पारित किया गया है।

इसने भारतीय किशोर अपराध क़ानून, किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2000 को प्रतिस्थापित किया।

- इसे 7 मई, 2015 को लोकसभा द्वारा कई संसद सदस्यों के तीव्र विरोध के बीच पारित किया गया था। इसे 22 दिसंबर, 2015 को राज्य सभा द्वारा पारित किया गया था।
- अधिनियम ने हिंदू दत्तक ग्रहण और रख-रखाव अधिनियम (1956) (हिंदुओं, बौद्धों, जैनियों और सिखों पर लागू) और संरक्षक और वार्ड अधिनियम (1890) (मुसलमानों पर लागू) को पीछे छोड़ते हुए भारत के लिए एक सार्वभौमिक रूप से सुलभ दत्तक क़ानून बनाने की माँग की। हालाँकि उन्हें प्रतिस्थापित नहीं कर रहा है। यह अधिनियम 15 जनवरी, 2016 से लागू हुआ।
- महिला एवं बाल विकास मंत्रालय ने 2011 में कई वांछित संशोधनों पर विचार करना शुरू किया और विभिन्न हितधारकों के साथ परामर्श की प्रक्रिया शुरू की गई। दिसंबर 2012 में दिल्ली सामूहिक बलात्कार मामले का अधिनियम के प्रति जनता की धारणा पर जबरदस्त प्रभाव पड़ा।
- जुलाई 2014 में महिला और बाल विकास मंत्री मेनका गांधी ने कहा कि वे एक नया क़ानून तैयार कर रहे हैं जो 16 साल के बच्चों को वयस्कों के रूप में पेश करने की

अनुमति देगा। उसने कहा कि 50 प्रतिशत किशोर अपराध किशोरों द्वारा किए गए थे, जिन्होंने सोचा था कि वे इससे बच सकते हैं।

- 2021 में, किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) संशोधन अधिनियम, 2021 भारत की संसद द्वारा पारित किया गया था। पिछले प्रावधानों में कहा गया है कि सिविल कोर्ट द्वारा गोद लेने का आदेश जारी करने पर बच्चे को गोद लेना अंतिम है। नया संशोधन यह प्रावधान करता है कि अदालत के बजाय, जिला मजिस्ट्रेट ऐसे गोद लेने के आदेश जारी करेगा।

**निष्कर्ष**

बाल अपराधियों को सुधारने में सरकार का काफी योगदान रहा है लेकिन इसके बावजूद भी अन्य समस्याओं के चलते इस समस्या पर काबू पाना संभव नहीं हो पा रहा है। बच्चे हमारे चारों तरफ हैं। वे दुनिया की लगभग एक चौथाई आबादी का प्रतिनिधित्व करते हैं। वे अपना बचाव करने के लिए सुसज्जित नहीं हैं; उन्हें इस बात पर निर्भर रहना चाहिए कि उन्हें क्या दिया गया है। वे परिस्थितियों के शिकार हैं। वे हमें खुशी देते हैं, वे हमारे लिए आँसू लाते हैं और वे हमारी आशा का कारण हैं। वे आपके बच्चे हैं, वे मेरे बच्चे हैं और वे दुनिया के बच्चे हैं। भारत में, किसी को भोजन के लिए भूखे बच्चे, सड़कों पर भीख माँगते हुए, जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं से वंचित बच्चे मिल जाएँगे और ऐसे बच्चे देश के कुल बच्चों का लगभग आधा हिस्सा हैं। अब समय आ गया है कि ऐसे मामलों में राज्य का हस्तक्षेप जरूरी है। इस तरह सरकार का किशोर न्याय में संशोधन करते समय देखभाल और सुरक्षा मुख्य उद्देश्य होना चाहिए।

❑

**संदर्भ**


1. https://www.onlyiwin.com/2021/05/juvenile-delinquency.html
2. www.bbc.com
3. www.dw.com
4. https://blog.ipleaders.in/juvenile-delinquency-related-legislations-india/
5. https://www.scotbuzz.org/2017/05/bal-aparadh-ke-karan.html

अमृता वर्मा एवं डॉ. अजय भूपेंद्र जायसवाल

# समान नागरिक संहिता : एक संवैधानिक लक्ष्य

हमारे देश में अधिकतर मामलों में एक जैसा क़ानून लागू होता है। जमीन का क्रय-विक्रय, किरायेदारी और अन्य दीवानी मामलों में पहले से ही एक जैसा क़ानून है, लेकिन विवाह, उत्तराधिकार, वसीयत, दतक ग्रहण जैसे मामलों में आज़ादी के पहले से ही अलग-अलग संप्रदायों के लिए अलग क़ानून रहे हैं। संविधान निर्माताओं ने महसूस किया कि विवाह और भरण-पोषण से जुड़े मामलों का संबंध किसी उपासना पद्धति से नहीं, बल्कि मानवीय गरिमा से है। यदि संतानहीन व्यक्ति किसी बच्चे को गोद लेकर अपनी वंश परंपरा आगे बढ़ाना चाहता है या उससे उसे सुरक्षा बोध का अहसास होता है, तो इससे किसी उपासना पद्धति की अवमानना कैसे हो सकती है? यदि किसी क़ानून से किसी महिला को सामाजिक सुरक्षा मिलती है या पति से अलग होने के बाद उसके लिए गुजारा भत्ते की व्यवस्था कर दी जाती है तो इसमें मत-मजहब क्यों आड़े आना चाहिए? यदि वैवाहिक संबंधों में समानता सुनिश्चित की जाती है तो इस पर किसी को आपत्ति कैसे हो सकती है?

**संविधान सभा का दृष्टिकोण**

समान नागरिक संहिता के बारे में संविधान सभा में बहस 23 नवंबर, 1948 को शुरू हुई थी। इस दिन संविधान सभा में संविधान के उन अनुच्छेदों पर विचार चल रहा था जिनमें नागरिकों के मूलभूत अधिकारों को परिभाषित किया गया था। उसी क्रम में संविधान के अनुच्छेद 35 को विचार के लिए पेश किया गया जिसमें कहा गया था कि ''भारत के समस्त राज्य/क्षेत्रा में नागरिकों के लिए राज्य एक समान व्यवहार संहिता प्राप्त करने का प्रयत्न करेगा।'' यह अनुच्छेद अभी के संविधान में राज्य के नीति-निदेशक तत्त्व के अंतर्गत अनुच्छेद 44 के रूप में विद्यमान है।

संविधान सभा के इस प्रस्ताव पर मद्रास के मुस्लिम संप्रदाय के प्रतिनिधि के रूप में मोहम्मद इस्माइल साह ने एक संशोधन प्रस्ताव पेश किया। इस संशोधन प्रस्ताव में कहा गया था कि उपरोक्त अनुच्छेद के साथ ही इस बात को भी जोड़ दिया जाना चाहिए कि ''किसी वर्ग, संप्रदाय या जाति का यदि कोई निजी क़ानून हो तो उसे वह क़ानून छोड़ने के लिए बाध्य नहीं किया जाएगा।''

मोहम्मद इस्माइल साहब की दलील यह थी कि किसी भी संप्रदाय या वर्ग का निजी क़ानून उस वर्ग या संप्रदाय के मूलाधिकार में से एक है। यह क़ानून उनके जीवन का भाग, उनके

धर्म का भाग, उनकी संस्कृति का भाग है। उसमें हस्तक्षेप उनकी जीवन प्रणाली में हस्तक्षेप करने के बराबर होगा।

श्रीमान नसरूद्दीन अहमद ने भी एक संशोधन प्रस्ताव पेश किया था जिसमें उन्होंने कहा था कि किसी भी जाति की पूर्व सहमति के बिना उसके निजी क़ानून में कोई परिवर्तन नहीं किया जाना चाहिए और इस प्रकार की पूर्व सहमति हासिल करने के लिए देश के संविधान में एक क़ानूनी व्यवस्था होनी चाहिए। उनकी भी यही दलील थी कि हर संप्रदाय के कुछ अपने विशेष धार्मिक क़ानून होते हैं, व्यवहार-विषयक क़ानून होते हैं जिनका उनके धार्मिक विश्वासों तथा आचरण से अखंड संबंध होता है। इसके साथ ही उन्होंने इस दिशा में शनैः-शनैः काम करने की गुजारिश भी की थी।

इसके बाद श्रीमान महबूब अली बेग ने भी निजी क़ानूनों में हस्तक्षेप का कड़ा विरोध किया और कहा कि ''साढ़े तेरह सौ वर्षों से मुसलमान इस क़ानून पर चलते रहे हैं और सब राज्यों के समस्त अधिकारियों ने इसे मान्यता प्रदान की है।'' उनके अनुसार, ''धर्म निरपेक्ष राज्य में विभिन्न जातियों के नागरिकों को अपना धर्म पालन करने में, अपने जीवन के आचरण में स्वतंत्रता होनी चाहिए तथा उनका निजी क़ानून उन पर लागू किया जाना चाहिए।''

मद्रास से ही आए मुस्लिम संप्रदाय के एक और प्रतिनिधि श्रीमान बी. पोकर साहब ने भी मोहम्मद इस्माइल साहब के प्रस्ताव का समर्थन किया।

श्रीमान हुसैन इमाम की दलील थी कि ''भारत इतना वृहद देश है, उसकी भारी जनसंख्या इतनी विविधता है उस पर कोई एक प्रकार का रंग चढ़ाना लगभग असंभव है। इसी आधार पर उन्होंने कहा कि सामान्य नागिरक संहिता क़ानून बनाना सर्वथा अब उपयुक्त तथा अति वांछनीय है।''

श्रीमान हुसैन इमाम के बाद बंबई से आए जनरल क्षेत्र के प्रतिनिधि श्रीमान श्री के. एम. मुंशी ने अनुच्छेद के विरोध के आधारभूत कारणों को समेटते हुए उन्होंने कहा कि इसके विरुद्ध मूलतः दो प्रकार के तर्क दिए जा रहे हैं। पहला यह कि इससे नागरिकों के मूलभूत अधिकारों का उल्लंघन होगा तथा दूसरा यह कि इससे अल्पसंख्यकों के प्रति अन्याय होगा।

जहाँ तक संविधान के अनुच्छेद 19 के अंतर्गत नागरिकों को दिए गए मूलाधिकारों के उल्लंघन का सवाल है, श्री मुंशी ने क़ानूनी दलील के आधार पर ही यह बताया कि इसी अनुच्छेद में इस बात को स्पष्ट कर दिया गया है कि यह अनुच्छेद राज्य के ऐसे किसी क़ानून बनाने के अधिकार में बाधक नहीं बनेगा जो क़ानून सामाजिक कल्याण तथा सुधार के लिए आवश्यक हो और जिसमें लौकिक क्रियाओं के साथ ही धार्मिक आचरण संबंधी विषय भी शामिल हैं। श्री मुंशी ने कहा कि ''यदि अब तक पालन किए जाने वाले किसी धार्मिक आचरण में लौकिक आचरण सन्निहित हों अथवा वह सामाजिक सुधार या सामाजिक कल्याण के क्षेत्रा में हो तो इस विषय में संसद को क़ानून बनाने का अधिकार होगा और इससे अल्पसंख्यकों के मूलाधिकार का उल्लंघन नहीं होगा।''

श्री मुंशी ने कहा कि इस अनुच्छेद का आशय भी यही है कि "जब भी संसद उपयुक्त समझे या बल्कि जब भी संसद में बहुमत उपयुक्त समझे तब देश के निजी क़ानूनों को एकरूप बनाने का प्रयास हो सकता है।"

समान नागरिक संहिता संबंधी अनुच्छेद के विरोध के दूसरे तर्क अर्थात् अल्पसंख्यकों के प्रति अन्याय के तर्क को उठाते हुए उन्होंने कहा कि अतीत में तथा हाल के वर्षों में भी ऐसे नाना उदाहरण मौजूद हैं जिसमें मुसलमानों के शरियत क़ानून में संशोधन किया गया है। श्री मुंशी ने बहुत ही स्पष्ट शब्दों में यह दलील दी कि "हम धर्म को निजी क़ानून से अलग करना चाहते हैं, उसे सामाजिक संबंधों तथा उत्तराधिकार के विषय में विभिन्न पक्षों के अधिकारों से अलग करना चाहते हैं।" उन्होंने कहा कि "इन चीजों का धर्म से क्या संबंध है यह वास्तव में मेरी समझ में नहीं आता।" इसी संदर्भ में उन्होंने हिंदू क़ानून के मसौदे का उल्लेख किया जो उस समय विधायिनी सभा के समक्ष विचाराधीन था। उन्होंने कहा कि यदि कोई मनु अथवा याज्ञवलक्य तथा अन्य शास्त्रों को देखें तो मेरे विचार से इस नए प्रावधान के अधिकांश प्रावधान उनके आदेशों के विपरीत हैं किंतु आखिर हमारा समाज प्रगतिशील है। हम ऐसी अवस्था में हैं जबकि हमें धार्मिक आचरणों में हस्तक्षेप किए बिना राष्ट्र को प्रत्येक उपाय से एक रूप तथा एक विधि बनाना चाहिए। किंतु यदि भूतकाल में धार्मिक आचरण का ऐसा अर्थ निकाला गया है कि उसमें जीवन का सारा क्षेत्रा सन्निहित हो जाता है, तो हम ऐसी अवस्था में पहुँच गए हैं कि हमें दृढ़ता से कह देना चाहिए कि ये विषय धर्म संबंधी नहीं हैं, वे लौकिक क़ानूनों के विषय हैं। श्री मुंशी ने कहा कि प्रस्तावित अनुच्छेद में बिल्कुल यही काम किया गया है।

जहाँ तक निजी क़ानून के विषय के साथ अल्पसंख्यकों का संबंध है, श्री मुंशी ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि यह केवल अल्पसंख्यकों का ही प्रश्न नहीं है, इसका संबंध बहुसंख्यकों से भी है। उन्होंने भारत के विभिन प्रांतों में हिंदुओं के भिन्न-भिन्न क़ानूनों की उपस्थिति का जिक्र किया।

यहीं पर आकर श्री मुंशी ने इस पूरे प्रसंग के मर्म बिंदु पर हाथ रख दिया। श्री मुंशी ने कहा कि यदि उत्तराधिकार आदि के प्रश्न को धर्म का हिस्सा मान लिया जाए तब "आप महिलाओं को कभी समानता प्रदान नहीं कर सकते।" उन्होंने कहा कि संविधान में लिंग के आधार पर कोई भेदभाव न बरतने की जो प्रतिज्ञा की गई है, यह सीधे तौर पर उसके विरुद्ध होगा। श्री मुंशी ने इसी सिलसिले में हिंदू क़ानून की चर्चा की और कहा कि यदि आप इस पर गौर करे तो आपको इसमें महिलाओं के विरुद्ध काफी भेदभाव दिखाई देगा। इसी को यदि हिंदू धर्म या हिंदू धार्मिक आचरण का हिस्सा मान लिया जाए तब तो ऐसा कोई क़ानून ही नहीं बनाया जा सकता जिससे स्त्रियों की अवस्था पुरुषों के समान बनाई जा सके। इसी के आधार पर श्री मुंशी ने कहा कि भारत के लिए एक सामान्य नागरिक संहिता न होने का कोई कारण नहीं है। श्री मुंशी ने अपने मुस्लिम मित्रों से यह अपील की कि "धर्म को ऐसे क्षेत्र में रखना चाहिए जो न्यायपूर्वक उसके क्षेत्र हैं, किंतु शेष जीवन को इस प्रकार नियमित,

एकरूपित तथा परिवर्तित करना चाहिए कि हम यथासंभव शीघ्र एक सबल तथा संगठित राष्ट्र का निर्माण कर सकें।''

अपने भाषण के अंत में उन्होंने निजी क़ानून को धर्म का हिस्सा मानने की भावना को अंग्रेजों तथा उनके न्यायालयों द्वारा उकसायी गई भावना बताया और इसे त्याग कर आगे बढ़ने की अपील की।

श्री मुंशी के बाद के वक्ता थे मद्रास के जनरल क्षेत्र के श्री अल्लादी कृष्णा स्वामी अय्यर। उन्होंने बुनियादी रूप से के.एम. मुंशी की बातों को ही अपना समर्थन प्रदान किया और कहा कि ''सदा अतीत से चिपके रहने से कोई लाभ नहीं है। हम एक महत्त्वपूर्ण बात में अतीत से विदा ले रहे हैं, वह यह है कि हम सारे भारत को एक ही राष्ट्र के रूप में बनाना तथा संगठित करना चाहते हैं।''

इस बहस के अंतिम वक्ता थे डॉ. भीमराव अंबेडकर। उन्होंने प्रस्तावित अनुच्छेद पर लाए गए संशोधनों को अस्वीकृत करते हुए सबसे पहले इस प्रश्न का जवाब दिया कि ''क्या इतने वृहद देश के लिए क़ानूनों की एक नागरिक संहिता बनाना संभव तथा वांछनीय है?'' अंबेडकर ने इस प्रश्न पर आश्चर्य व्यक्त करते हुए कहा कि ''हमारे यहाँ इस देश में मानवीय संबंधों के लगभग प्रत्येक क्षेत्र में क़ानूनों की सामान्य विधि शृंखला है। हमारे यहाँ दंड विधान में एक सामान्य तथा संपूर्ण दंड क़ानून निहित है, जो सारे देश पर लागू है और एक दंड विधि संहिता भी है। हमारे यहाँ संपत्ति हस्तांतरण का क़ानून है, जो संपत्ति के संबंध के विषय में है तथा सारे देश पर लागू है। ...मैं असंख्य उदाहरण दे सकता हूँ जिनसे यह सिद्ध हो जाएगा कि इस देश में लगभग एक ही व्यवहार संहिता है, जो एक समान है तथा समस्त देश पर लागू है।''

श्री अंबेडकर ने बताया कि अकेले विवाह तथा उत्तराधिकार का क्षेत्र ही ऐसा है जिसमें अब तक व्यवहार क़ानून हस्तक्षेप नहीं कर पाया है। संविधान के इस 35वें अनुच्छेद के जरिए हम यही करना चाहते हैं।

सामान्य नागरिक संहिता क़ानून बनाना उपयुक्त है या अनुपयुक्त, इस तरह के प्रश्न को उन्होंने बिल्कुल अप्रासंगिक बताया, क्योंकि उनके अनुसार, ''हमने वास्तव में उन सब विषयों पर क़ानून बना दिए हैं जो इस देश में व्यवहार संहिता में निहित होते हैं। उन्होंने सदस्यों को चुनौती देते हुए कहा कि भारत में ही मुसलमानों का निजी क़ानून हमेशा अटल नहीं रहा है। ''सन् 1935 तक पश्चिमोत्तर सीमा प्रांत में शरियत क़ानून लागू नहीं था। उत्तराधिकार तथा अन्य विषय में वहाँ हिंदू क़ानून का अनुसरण किया जाता था, यहाँ तक की 1935 में केंद्रीय विधान मंडल को इस विषय में हस्तक्षेप करना पड़ा तथा पश्चिमोत्तर सीमा प्रांत के मुसलमानों पर हिंदू क़ानून का लागू होना बंद करवाकर वहाँ शरियत क़ानून लागू करना पड़ा ...पश्चिमोत्तर सीमा प्रांत के अतिरिक्त शेष भारत के भी विभिन भागों में, यथा संयुक्त प्रांत, मध्य प्रांत तथा बंबई में उत्तराधिकार के विषय में काफी हद तक मुसलमानों पर हिंदू क़ानून लागू था। उन्हें दूसरे मुसलमानों के साथ, जो शरियत पर चलते थे, एक स्तर पर लाने के

लिए 1937 में विधान मंडल को हस्तक्षेप करना पड़ा तथा शेष भारत पर शरियत क़ानून लागू करने के लिए एक क़ानून बनाना पड़ा। ...उत्तरी मालाबार में मरूमकतायम क़ानून केवल हिंदुओं पर नहीं, मुसलमानों पर भी लागू था। स्मरण रखना चाहिए कि मरूमकतायम क़ानून मातृ-प्रधान क़ानून है, अतएव ऐसा कहने से कोई लाभ नहीं है कि मुस्लिम क़ानून एक अटल क़ानून है जिसका वे प्राचीन समय से अनुसरण करते रहे हैं।'' श्री अंबेडकर ने यह भी बताया कि मुस्लिम क़ानून के नाम से आज जो क़ानून चल रहा है उसे देश के कई हिस्सों में मात्रा 10 वर्ष पहले लागू किया गया था।

अपने वक्तव्य के अंत में डॉ. अंबेडकर ने सदस्यों की भावना को समझते हुए यह कहा कि अनुच्छेद 35 से खींचतान कर बहुत ज्यादा अर्थ नहीं निकालना चाहिए। यह अनुच्छेद सिर्फ एक सुझाव है कि राज्य देश के नागरिकों के लिए समान व्यवहार संहिता के निर्माण का प्रयत्न करेगा।

इस प्रकार, बहस के अंत में संविधान सभा में अनुच्छेद 35 पर जितने भी संशोधन प्रस्ताव आए थे उन सबको अस्वीकृत कर दिया गया और अनुच्छेद 35 को संविधान का हिस्सा बना दिया गया।

तब से अब तक 75 वर्ष बीत चुके हैं। राज्य के नीति-निदेशक तत्त्वों के अनुच्छेद 44 के रूप में उपरोक्त अनुच्छेद 35 संविधान के एक स्थायी अंग के रूप में बरकरार है।

**न्यायिक दृष्टिकोण**

ब्रिटिश काल से लेकर आज तक तथा स्वतंत्रता और संविधान के बाद से और भी ज्यादा, जीवन के प्रत्येक सांसारिक क्षेत्रों में जाति, संप्रदाय, नस्ल और धर्म की बिना परवाह किए भारत में समान क़ानूनों और अदालतों की एक व्यवस्था चली आ रही है। इनमें दो प्रस्ताव विवाद से परे हैं। पहला यह कि मानवीय व्यापार के हर क्षेत्र यहाँ तक कि धार्मिक स्वतंत्रता तथा इसकी सीमाओं के मामले में भी क़ानून बनाने के विधायिका के अधिकार को चुनौती नहीं दी जा सकती हैं। हमारे देश में इस्लामिक क़ानून लागू होते हैं इसलिए नहीं कि वे कुरान द्वारा बनाए गए हैं (जो मुसलमानों के लिए सबसे श्रेष्ठ मूल्य रखती है), बल्कि इसीलिए कि भारतीय राज्य ऐसा चाहता है। इसी प्रकार हिंदुओं के धर्मग्रंथ कितने ही पवित्र क्यों न हों, राज्य के अधिकार के जरिए ही किसी प्रकार के बाध्यतामूलक क़ानून का रूप ले सकते हैं। पादरी का मुकुट नहीं, बल्कि राज्याधिकार इसाइयों को शासित करता है। धर्मगुरु नहीं, बल्कि अदालत क़ानून की व्याख्या करती है, उसे लागू करती है तथा राजसत्ता, न कि कोई ईश्वरीय सत्ता, उन नियमों को बनाती है या उनमें सुधार करती है जो नियम बाध्यमूलक होते हैं।

''दूसरा प्रस्ताव यह है कि धर्म को धर्मनिरेपक्षता से अलग करने वाली तथा 'सीजर' और ईश्वर'' के बीच सीमा-रेखा खींचने वाली क़ानूनी सीमाओं के मामले में पंचायत करने का अधिकार अदालत के पास है। यदि कोई न्यायिक मामले में ऐसा कोई विवाद उठ खड़ा होता है, जिसमें

धर्म की राज्य के क़ानूनों से टकराहट होने लगे तो कोई उलेमा, आचार्य या धर्माध्यक्ष नहीं, बल्कि अदालत ही दोनों की सीमाओं की घोषणा करती है।''

ये शब्द हैं सुप्रीम कोर्ट के पूर्व न्यायाधीश, प्रसिद्ध न्यायविद् वी.आर. कृष्ण अय्यर के। 10 मई, 1995 के दिन सुप्रीम कोर्ट ने अपनी ऐतिहासिक राय में भारत सरकार से यह सवाल किया था कि उसने क़ानून के निदेशक सिद्धांत का पालन करते हुए देश के सभी नागरिकों के लिए एक समान नागरिक संहिता को विकसित करने की दिशा में कौन से कदम उठाए हैं? सुप्रीम कोर्ट के इस प्रश्न के साथ ही समान नागरिक संहिता का प्रश्न शाहबानो मुकदमे के बाद फिर एक बार एक प्रमुख संवैधानिक प्रश्न के रूप में उभर कर सामने आया। सुप्रीम कोर्ट ने तत्कालीन प्रधानमंत्री पी.वी. नरसिम्हा राव से समान नागरिक संहिता तैयार करने की दिशा में काम करने की माँग की थी। सुप्रीम कोर्ट की इस राय को चुनौती देते हुए उसी अदालत में एक याचिका दायर की गई, जिस पर तीन माननीय न्यायाधीशों की पीठ ने अपनी राय देते हुए यह स्पष्टीकरण दिया था कि सर्वोच्च अदालत की पहले की राय एक निर्देश होने के बावजूद कोई ऐसा निर्देश नहीं था, जिस पर तत्काल अमल किया जाए। सर्वोच्च अदालत ने प्रसंगवश समान नागरिक संहिता के विषय में अपनी राय जाहिर की थी, जो बाध्यतामूलक नहीं थी।

शाहबानो मामले में सुप्रीम कोर्ट ने यह राय दी थी कि शाहबानो मुस्लिम संप्रदाय की होने के बावजूद तलाक देने वाले अपने पति से सामान्य फौजदारी क़ानून के अंतर्गत तलाकशुदा औरतों को भरण-पोषण हासिल करने के लिए दिए गए अधिकार को हासिल कर सकती है। मुख्य न्यायाधीश चंद्रचूड़ की अध्यक्षता में गठित सुप्रीम कोर्ट की खंडपीठ ने अपने इस ऐतिहासिक फैसले के अंत में, खासतौर पर इस बात पर दुःख जाहिर किया कि ''हमारे संविधान की अनुच्छेद-44 मृत अक्षरों की तरह पड़ी हुई है।" सरकारी गतिविधियों का ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिलता कि वह देश के लिए एक समान नागरिक संहिता तैयार कर रही है। लगता है एक ऐसे विश्वास ने जड़ें जमा ली हैं कि अपने निजी क़ानून में सुधारों के मामले में मुस्लिम निजी संप्रदाय को ही पहल करनी होगी। एक समान नागरिक संहिता परस्पर विरोधी विचारधाराओं के क़ानूनों के प्रति बिखरी हुई वफादारियों को समाप्त करके राष्ट्रीय अखंडता के हित में सहायक होगी। इस मामले में उदारता के साथ रियायतें देकर कोई भी संप्रदाय बिल्ली के गले में घंटी बाँधने वाला नहीं है। राज्य का यह कर्त्तव्य है कि वह देश के नागरिकों के लिए एक समान नागरिक संहिता हासिल करे तथा निःसंदेह राज्य के पास यह काम करने की वैधानिक योग्यता भी है।''

इसके बाद ही इस फैसले में अदालत में सुनने को मिली राजनीतिक बहस के बारे में एक महत्त्वपूर्ण बात का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि ''हम अलग-अलग विश्वास तथा धर्म के लोगों को एक साझा मंच पर लाने की कठिनाइयों को समझते हैं, लेकिन यदि संविधान को सार्थक बनाना है तो, एक शुरूआत करनी ही होगी।''

इसी फैसले में माननीय न्यायाधीशों ने यह टिप्पणी भी की है कि इस मामले में कौन पहल करे और कौन न करे, से कहीं ज्यादा जरूरी यह है कि राज्य अपनी भूमिका अदा करे।

इस फैसले का अंत अल्लामा इकबाल के एक उल्लेखनीय उद्धरण से किया गया है जिसमें वे कहते हैं -- ''निकट भविष्य में मुस्लिम देशों के सामने जो एक प्रश्न आएगा, वह यह कि क्या इस्लाम के क़ानून का विकास हो सकता है? यह एक ऐसा प्रश्न है जिस पर भारी बौद्धिक प्रयासों की जरूरत होगी और उसका निश्चित उत्तर सकारात्मक ही होगा।''

उस समय मुस्लिम तत्त्ववादियों, उलेमाओं आदि ने भारी शोर मचाया और इसके परिणाम स्वरूप सुप्रीम कोर्ट की जो राय मुस्लिम औरतों को समानता दिलाने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम हो सकती थी, उसी की ओट में केंद्रीय सरकार ने एक ऐसा क़ानून बना दिया जिससे तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं के लिए भरण-पोषण हासिल करने का जो सरल रास्ता था, वह भी रुक गया।

अलग-अलग नागरिक क़ानूनों के चलते नागरिक जीवन में विकृतियाँ और विरूपता पैदा होती है। यह विकृति विवाह संबधी हिंदू क़ानून के अन्तर्गत है कि कोई भी हिंदू धर्मावलंबी एक से अधिक विवाह नहीं कर सकता है, लेकिन मुस्लिम निजी क़ानून के अंतर्गत एक से अधिक विवाह करने की छूट है, इसलिए कुछ हिंदू लोग एक से अधिक शादी करने के लिए ही इस्लाम को अपना लेते हैं। इसी पर राय सुनाते हुए 10 मई, 1995 के ऐतिहासिक फैसले में सुप्रीम कोर्ट ने साफ शब्दों में कहा कि पहली शादी के बिना समाप्त हुए इस्लाम कबूल करके किसी हिंदू पति द्वारा दूसरी शादी करना गैर-क़ानूनी है, तथा इसके लिए वह दंड का अधिकारी है। सुप्रीम कोर्ट का यह मामला 'कल्याणी' नामक एक संस्था की अध्यक्ष **सरला मुद्गल तथा मीना माथुर** द्वारा दायर की गई याचिका के जरिये आया था।

सुप्रीम कोर्ट के दो न्यायाधीशों, न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह और न्यायमूर्ति आर.एन. सहाय की खंडपीठ ने इस मामले में अपना फैसला सुनाया था। हिंदू पति द्वारा इस्लाम कबूल करके दूसरी शादी करने को गैर-क़ानूनी घोषित करने के साथ ही दोनों न्यायाधीशों ने अपने अलग-अलग फैसलों में इस बात की ओर इशारा किया कि 41 वर्ष बाद भी आज के शासक संविधान के अनुच्छेद 44 को उस ठंडे बस्ते से निकालने की मानसिकता में नहीं हैं, जहाँ वह 1949 से पड़ी हुई है। अदालत ने भारत सरकार के क़ानून और न्याय मंत्रालय के सचिव के माध्यम से भारत सरकार को यह निर्देश दिया कि अगस्त 1996 तक एक हलफनामे के जरिये वह यह बताये कि ''भारत के नागरिकों के लिए एक समान नागरिक संहिता हासिल करने की दिशा में उसने कौन से कदम उठाये और क्या प्रयास किए?'' अदालत ने यह भी कहा कि विवाह और उत्तराधिकार की तरह के सवाल धर्मनिरपेक्ष प्रकृति के हैं, उन्हें प्रार्थना और विश्वास के साथ गड्ड-मड्ड नहीं किया जाना चाहिए। 50 के जमाने में जवाहर लाल नेहरू के प्रयास से हिंदू निजी क़ानून को एक नागरिक संहिता के मातहत रखा गया था, लेकिन अन्य संप्रदायों के साथ ऐसा नहीं किया गया। न्यायमूर्ति सहाय ने इस तथ्य को दोहराया कि ट्यूनीशिया, सीरिया, पाकिस्तान, इरान तथा मोरक्को सहित कई इस्लामिक देशों में बहु-विवाह पर रोक है या प्रतिबंध है। इस तुलना में धर्मनिरपेक्ष भारत इन धर्म आधारित राज्यों से काफी पीछे रह

गया है। न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह ने इस मामले में तत्काल निर्णय लेने की बात कही, लेकिन न्यायमूर्ति सहाय ने अपने फैसले में कहा कि पहला कदम धार्मिक और सांस्कृतिक सद्भाव कायम करने के लिए अल्पसंख्यकों के निजी क़ानून को विवेकसंगत बनाकर उठाया जाना चाहिए। सुप्रीम कोर्ट की राय में यह कहा गया कि जब भारत के 80 प्रतिशत से अधिक नागरिकों के क़ानून संहिताबद्ध हो चुके हैं, तब बाकी को अधर में रखने का कोई तर्क नहीं है। समान नागरिक संहिता भारत के सीमा क्षेत्र में रहने वाले सभी नागरिकों के लिए लागू होगी। अदालत ने इस ओर संकेत किया कि ''संविधान का अनुच्छेद 44 इस अवधारणा पर आधारित है कि किसी भी सभ्य समाज में धर्म और निजी क़ानून के बीच कोई अनिवार्य रिश्ता नहीं है। अनुच्छेद 25 धार्मिक स्वतंत्रता को सुनिश्चित करती है, जबकि अनुच्छेद 44 सामाजिक संबंधों और निजी क़ानून से धर्म को अलग करती है।''

**उच्चतम न्यायालय :** तलाक के अधिकारों का संरक्षण अधिनियम, 1986 की धाराएँ 3 और 4 जिसके अधीन एक मुस्लिम पति को अपनी तलाकशुदा पत्नी की तलाक के बाद भी भरण-पोषण के लिए युक्ति-युक्ति और उचित व्यवस्था कराना एक विधिक एवं संवैधानिक दायित्व है।

न्यायमूर्ति ए.एस. आनंद और के. वेंकट स्वामी ने जान वलामत्तम बनाम भारत संघ, AIR 2003 SC 2902 के मामले में उच्चतम न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की पीठ ने एक बार पुनः समान सिविल संहिता के न बनाने के लिए दुःख प्रकट किया है। इस मामले में एक ईसाई पादरी ने भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम 1925 की धारा 118 की विधि मान्यता को इस आधार पर चुनौती दी थी कि वह अनुच्छेद-14 का उल्लंघन करता है धारा 118 एक व्यक्ति को जिसके कोई भतीजा था भतीजी थी नजदीकी संबंधी है उसे अपनी संपत्ति को धार्मिक उद्देश्यों के लिए वसीयत द्वारा दान करने से रोकता है। धारा 28 के अनुसार पत्नी नजदीकी संबंधी में नहीं सम्मिलित की गई थी। यद्यपि गोद लिया हुआ बच्चा नजदीकी संबंधी में आता है किंतु पत्नी नहीं आती थी। इस शर्त को न्यायालय ने असंवैधानिक घोषित कर दिया। न्यायमूति श्री वी.एन. खरे ने समान सिविल संहिता बनाने के लिए जोरदार सिफारिश की। उन्होंने कहा कि अनुच्छेद-44 इस धारणा पर आधारित है कि एक सभ्य समाज में धर्म और व्यक्तिगत विधि में कोई संबंध नहीं है। अनुच्छेद-25 धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान करता है किंतु अनुच्छेद-44 धर्म को सामाजिक और व्यक्तिगत विधि से पृथक् करता है। यह स्पष्ट है कि विवाह, उत्तराधिकार और इस प्रकार की पंथ निरपेक्ष बातें अनुच्छेद-25 के अंतर्गत नहीं आती है।

इस प्रकार की समान नागरिक संहिता को तैयार करने के लिए जिस आधार को निर्मित करने की जरूरत है, वह धर्म निरपेक्षता तथा उससे जुड़ी हुई चेतना को मजबूत करके ही किया जा सकता है, जिससे प्रत्येक अल्पसंख्यक समुदाय अपने को सुरक्षित महसूस करे और उनमें यह पूर्ण विश्वास पैदा हो कि उनके अधिकार सुरक्षित हैं ''न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने इस प्रसंग में लिखे गए अपने लेख में, निष्कर्ष के तौर पर यह लिखा कि ''हम महिलाओं को समान दर्जा तथा मानव अधिकार दिए जाने के लिए और ज्यादा प्रतीक्षा नहीं कर सकते हैं। तत्त्ववादी

या राजनीतिक रणनीति कुछ भी क्यों न सोचे, किसी भी धर्म का कोई मूल्य नहीं रह जाता यदि वह असमानताओं को समाप्त नहीं करता तथा महिलाओं और बच्चों के लिए हर दृष्टि से समान दर्जा दिलाने की बात नहीं करता।''

जाहिर है कि समान नागरिक संहिता का लक्ष्य एक गंतव्य है, जहाँ तक पहुँचने के लिए सर्वांगीण प्रयास करने की जरूरत है। भारत की धर्म निरपेक्ष राजनीतिक व्यवस्था का भविष्य इसके साथ जुड़ा हुआ है। यह समाधान लौकिक उपायों से ही किया जा सकता है। इस सत्य को बिना समझे धर्म निरपेक्षता और उससे जुड़ी चेतना को बल नहीं पहुँचाया जा सकता।

विधि आयोग ने अपने 21वें रिपोर्ट में समान नागरिक संहिता का प्रश्न 22वें आयोग पर छोड़ते हुए पारिवारिक विधि के संहिताकरण का सुझाव दिया है।

संविधान सभा से लेकर उच्चतम न्यायालय तक महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन और सुरक्षा के लिए सामान नागरिक संहिता को लेकर अपना प्रयास करते रहे हैं। अनुच्छेद-44 नीति निर्देशक तत्त्व के श्रेणी में है। यह कर्त्तव्य राज्य का है राज्य जो अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार संधियों को स्वीकार कर स्त्री और पुरुष के बीच सभी प्रकार का भेदभाव समाप्त करने की बाध्यता स्वीकार करता है। राज्य को अपने संवैधानिक कर्त्तव्य का पालन करने हेतु समान नागरिक संहिता लागू करना चाहिए ताकि महिलाएँ स्वतंत्रतापूर्वक बिना धार्मिक हस्ताक्षेप के अपना नागरिक जीवन जी सकें।

❑

## संदर्भ


1. डॉ. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी, 'भारतीय संविधान के प्रमुख तत्त्व' विधि साहित्य प्रकाशन, भारत सरकार, (1981), नई दिल्ली।
2. डॉ. जे.एन. पांडेय, 'भारतीय संविधान' सेंट्रल लॉ एजेंसी, इलाहाबाद, (1983)
3. चंद्रशेखर मिश्रा, 'भारत का संवैधानिक इतिहास' विधि साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. श्याम सिंह, 'संविधान सभा में अंबेडकर' सम्यक् प्रकाशन, (2010), नई दिल्ली।
5. सरला महेश्वरी, 'सामान नागरिक संहिता' राधाकृष्ण प्रकाशन, (2004), जनकपुरी, दिल्ली।
6. वी.एन. सिंह, जनमेजय सिंह, 'नारीवाद' रावत पब्लिकेशन, (2018), नई दिल्ली।
7. चेतन मेहता, डॉ. भीमराव अंबेडकर (संवैधानिक दर्शन), पब्लिकेशन कारपारेशन, (2004), नई दिल्ली।
8. सरला मुद्‌गल Vs भारत संघ, (1995) 3 SCC 635
9. प्रगति वर्जीज Vs सिहील जार्ज वर्गीज AIR 1997 Bandra 349
10. नूर सबा खातून Vs मो. कासिम AIR 1997 SC 3280
11. डेनियल लतीफी Vs भारत संघ AIR 2002 SCC 3958
12. जान वालमत्राम Vs भारत संघ AIR 2003 SC 2909

संतोष बंसल

# चौरी-चौरा कांड बनाम भीड़ तंत्र

चूँकि चौरा-चौरी कांड को सौ साल पूरे होने जा रहे हैं, इसीलिए इसके उपलक्ष्य में शताब्दी समारोह का आयोजन किया गया है जिसका वर्चुअल उद्‌घाटन करते हुए प्रधान मंत्री ने इस मौके पर एक डाक टिकट भी जारी किया, साथ ही अब ब्रिटिश दस्तावेजों में लिखित 'कांड' शब्द को हटा कर भारतीय इतिहास में 'चौरी-चौरा क्रांति' लिखा जाएगा। यह कार्यक्रम उत्तर प्रदेश के सभी 75 जिलों में एक साल तक आयोजित किया जाएगा और 4 फरवरी, 2022 को इसका समापन होगा। ऐसे में इस ऐतिहासिक घटना को समसामयिक संदर्भ में देखते हुए वर्तमान भीड़ तंत्र की जाँच करें और यह भी सोचा और विचारा जाए कि क्या महात्मा गाँधी द्वारा अपनाया गया अहिंसा का मार्ग आज के भीड़ तंत्र को नियंत्रित करने के लिए उतना ही उपयुक्त है? क्योंकि भीड़ द्वारा हिंसा कोई नई बात नहीं है, इतिहास ऐसी घटनाओं से भरा पड़ा है। फर्क सिर्फ इतना है कि आधुनिक युग में एक पुराने रिवाज़ को नया औजार मिल गया है, जिससे यह घटना क्रम अधिक डरावना और ख़ौफ़नाक हो गया है। समय के बदलाव एवं सत्ता के परिवर्तन के साथ वैज्ञानिक दृष्टि से अब सोशल मीडिया पर खबरों की तेज रफ्तार है। जिससे व्हाट्सअप जैसे माध्यम भीड़ तंत्र के लिए अफवाहें फैलाने का काम करते हैं एवं सत्यता से विपरीत आभासी सूचना ही हिंसा का कारण बन जाती है।

स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व हमारा विरोध विदेशी सत्ता से था, जबकि अब भीड़ द्वारा घटित दुर्घटनाएँ धर्म और जाति के नाम पर होती हैं। अगर हम चौरा-चौरी कांड और भीड़ तंत्र की चर्चा करें तो सबसे पहले हमें घटनाओं को तुलनात्मक दृष्टि से देखना होगा। इस के अतिरिक्त कैसे भारतीय मानसिकता 'आग में घी डालने' का काम करती है? और क्रिया की प्रतिक्रया का क्या अंजाम होता है? इस पहलू को देखना और जाँचना होगा। वैसे आम भारतीय जब भीड़ का अंग होता है, तो उसका व्यवहार एक खास तरह की क्रूरता से भरपूर होता है। कई मौकों पर तो भीड़ बर्बरता की हदें पार कर जाती है, जिनमें जान-माल का भारी नुकसान होता है। भीड़ द्वारा असंवैधानिक कार्यों को अंजाम देते हुए क़ानून को अपने हाथ में ले लिया जाता है।

अगर हम इतिहास में झाँके तो चौरी-चौरा कांड स्वतंत्रता संग्राम की मुहिम के दौरान फैला जनाक्रोश था, जो बाद में बड़े बदलाव का साक्षी बना। महात्मा गाँधी के असहयोग आंदोलन

के दौरान 4 फरवरी, 1922 को कुछ लोगों की गुस्साई भीड़ ने गोरखपुर के चौरी-चौरा के पुलिस थाने में आग लगा दी, जिसमे 23 पुलिस वालों की मौत हो गई थी। इससे पहले चौरी-चौरा पुलिस स्टेशन के थानेदार ने मुँडेरा बाजार में कुछ कांग्रेसी कार्यकर्ताओं को मारा था, जिसमें इस घटना के दौरान तीन नागरिकों की भी मौत हो गई थी। परिणाम स्वरूप भीड़ थाने के बाहर जमा हो गई, जहाँ पर हिंसा के बाद महात्मा गाँधी ने अपना आंदोलन वापिस ले लिया। उनके इस फैसले को लेकर क्रांतिकारियों का एक दल नाराज हो गया और कांग्रेस दो विचारधाराओं में विभाजित हो गई। एक था नरम दल, दूसरा गरम दल। लेकिन गाँधीजी ने अपने लेख 'चौरी-चौरा का अपराध' में लिखा कि अगर ये आंदोलन वापिस नहीं लिया जाता तो दूसरी जगहों पर भी ऐसी घटनाएँ होती। उन्होंने इस घटना के लिए एक तरफ जहाँ पुलिस वालों को जिम्मेदार ठहराया, क्योंकि उनके उकसाने पर ही भीड़ ने ऐसा कदम उठाया था। दूसरी तरफ घटना में शामिल तमाम लोगों को अपने आपको पुलिस के हवाले करने को कहा, क्योंकि उन्होंने अपराध किया था। इस के बाद गांधीजी पर राजद्रोह का मुकदमा भी चला और मार्च 1922 में उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया था। यधपि असहयोग आंदोलन का प्रस्ताव कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में 4 सितंबर, 1920 को पारित हुआ था और इसके तहत उन्होंने उन सभी वस्तुओं, संस्थाओं और व्यवस्थाओं का बहिष्कार करने का फैसला किया था, जिसके कारण अंग्रेज भारतीयों पर शासन कर रहे थे। महात्मा गाँधी ने विदेशी वस्तुओं, अंग्रेजी क़ानून, शिक्षा और प्रतिनिधि सभाओं के बहिष्कार की बात कही थी और खिलाफत आंदोलन के साथ मिल कर असहयोग आंदोलन कामयाब भी रहा था। गाँधीजी यह भी मानते थे कि अगर असहयोग आंदोलन के सिद्धांतों का सही से पालन किया गया तो एक साल के अंदर अंग्रेज़ भारत छोड़कर चले जाएँगे।

दरअसल चौरी-चौरा कांड आज़ादी के आंदोलन का एक ऐसा गुमनाम पन्ना है, जिसे इतिहास के पन्नों में कोई जगह नहीं दी गई। ब्रिटिश शासन काल में यह स्थल कपड़ों और अन्य वस्तुओं की बड़ी मंडी हुआ करता था, जहाँ घटना से दो दिन पूर्व ब्रिटिश भारतीय सेना के एक सेवानिवृत सैनिक के नेतृत्व में असहयोग आंदोलन में उच्च खाद्य कीमतों और शराब की बिक्री का विरोध किया था। इसमें भाग लेने वाले स्वयं सेवकों एवं प्रदर्शनकारियों को स्थानीय दरोगा गुप्तेश्वर सिंह और अन्य पुलिस अधिकारियों ने पीटा एवं कई नेताओं को गिरफ्तार कर चौरी-चौरा के थाने में बंद कर दिया। इसके जवाब में चार फरवरी को तकरीबन दो-ढाई हजार प्रदर्शनकारियों ने बाजार में पुलिस के खिलाफ धरना दिया, जहाँ पुलिस द्वारा उन पर गोलियाँ चलाने से तीन की मौत हो गई और बहुत से घायल हो गए। तब गुस्साई भीड़ ने चौकी में आग लगा दी, जिसमें सभी पुलिस कर्मियों की मौत हो गई। यधपि गाँधीजी ने चौरी-चौरा की घटना को बर्बरता और हिंसा माना और इस रक्तपात की स्वयं जिम्मेदारी ली तथा 12 फरवरी, 1922 को बारदोली में हुई कांग्रेस की बैठक में असहयोग आंदोलन को समाप्त करने का निर्णय लिया। लेकिन सुभाष चंद्र सरीखे नेता ने इसकी प्रतिक्रिया में कहा, ''ठीक इस

समय जब कि जनता का उत्साह चरमोत्कर्ष पर था, वापस लौटने का आदेश देना राष्ट्रीय दुर्भाग्य से कम नहीं।'' इसके बावजूद महात्मा गाँधी के इस आंदोलन को विदेशी लेखक सफल मानते हैं, क्योंकि सन् 1857 की क्रांति के बाद असहयोग आंदोलन ने अंग्रेजी राज की नींव हिला दी थी। अमेरिकी लेखक लुई फिशर ने लिखा है कि असहयोग आंदोलन शांति की दृष्टि से नकारात्मक लेकिन प्रभाव की दृष्टि से बहुत सकारात्मक साबित हुआ। बिपिनचंद्र जैसे इतिहासकारों ने तर्क दिया कि अहिंसा की गाँधीवादी रणनीति का उद्देश्य यह प्रदर्शित करना था कि अहिंसक प्रदर्शनकारियों के खिलाफ दमनकारी बल का उपयोग औपनिवेशिक राज्य के वास्तविक चरित्रा को उजागर करेगा। और अंततः उन पर नैतिक दबाव पड़ेगा, लेकिन चौरी-चौरा जैसी घटनाएँ इस रणनीति के विपरीत हो गई।

वस्तुतः चौरा-चौरी कांड के बाद बापू का अचानक आंदोलन बंद करना एक दूरगामी सोच थी एवं सत्याग्रह की राह से भटकने पर वे खुद को भी सज़ा देने से पीछे नहीं हटे। इस निर्णय के बारे में गांधीजी ने 'यंग इंडिया' में लिखा था, ''आंदोलन को हिंसक होने से बचाने के लिए मैं हर अपमान, हर एक यातना पूर्ण बहिष्कार यहाँ तक की मौत भी सहने को तैयार हूँ।'' इस प्रकार जहाँ गाँधीजी ने हमेशा अंतरात्मा की आवाज सुनने और मानने को वरीयता दी, वहीं उन्होंने अस्थायी क़ानूनों को उस वक्त तोड़ने की सलाह दी, जब समाधान के अन्य रास्ते बंद हो जाएँ। पारदर्शी और सार्वजनिक रूप से विरोध जताने के अलावा गाँधी एक सत्याग्रही के रूप में हमेशा खुद के प्रति जिम्मेदार रहे। गाँधीजी ने सत्याग्रह के अर्थ को विस्तार दिया, ताकि आम लोगों के चरित और चलन में वह शामिल हो। यह उन की ही खासयित है कि वे साफ-सफाई, शराब बंदी, गोरक्षा, दलितोद्धार, खेती-किसानी जैसे मुद्दों को भी आज़ादी की लड़ाई से जोड़ देते हैं। इसके अलावा, भारतीय संस्कृति की एक बुनियादी विशेषता अहिंसा को धर्म-अध्यात्म के रूढ़ दायरों से बाहर निकाल कर सामाजिक जीवन की व्यवहारिकता में स्थापित करने के, महात्मा गांधी के महान योगदान को क्या कभी भुलाया जा सकता है? तभी तो आइन्स्टीन जैसे महान वैज्ञानिक ने गाँधीजी में इस युग का आश्चर्य देखा। उनका जीवन जितना सरल है, उन्हें समझना उतना ही कठिन। प्रयोग धर्मी थे बापू, तभी यह कहने का दम रखते थे कि मेरा जीवन ही मेरा संदेश है। उन के नमक क़ानून आंदोलन पर पुस्तक लिखने वाले लेखक श्री वेणु माधव गोविंदु के अनुसार, ''गाँधीजी ने सत्याग्रह के अर्थ को विस्तार दिया, ताकि रोजमर्रा के जीवन में एक नैतिक दृष्टि पैदा की जा सके। जो लोग इस पथ का अनुकरण करना चाहते थे, उनके लिए आत्म-मूल्यांकन के कुछ मापदंड निर्धारित किए। महात्मा ने सत्य व अहिंसा के मूल्यों को जिस तरह जन-राजनीति में शामिल किया, वही उनकी सच्ची प्रतिभा थी।'' (लेख : राजनीतिक प्रतिरोध का अनोखा तरीका, हिंदी हिंदुस्तान, 25 सितंबर, 2019)

विडंबना यह है कि आज़ादी की लड़ाई में सफलता के बावजूद गाँधी की विचारधारा की मौजूदगी भारत में नाम मात्रा को ही है। वैसे आधुनिक युग में चाहे कोई गाँधीवादी नीतियों

को बेमानी या बेकार कहे, लेकिन विरोध करने का उनका मार्ग सभी धर्मों और जातियों के लोगों को लेकर चलने वाला था। जबकि आज की राजनीति सुनियोजित ढंग से समाज को बांटने का काम करने वाले संगठनों की हरकत है, जो हिंदुत्व के नाम पर अपनी मनमानी कर रहे हैं। यधपि समाज में बढ़ती भीड़ तंत्र की घटनाओं के कारण और बहाने चाहे जो भी हों, मौका मिलते ही खुद को हिंसक भीड़ में तब्दील करने की प्रवृत्ति थमी नहीं है। इस भीड़ का न कोई चरित्रा होता है, न चेहरा। वह अलग समय और अलग हालात पर अलग चेहरा लेकर मौजूद होती है, और वैसा ही आचरण करती है। जब हम पगलाई भीड़ की बात कहते हैं, तो इसका अर्थ समाज में फैल रहा कोई पागलपन नहीं। बल्कि हमारे बीच ऐसे बहुत से लोग और संगठन हैं, जो अपने निहितार्थ स्वार्थों के लिए या अपनी नफरत भरी सोच के चलते लोगों की भावनाओं को भड़कातें हैं और अपना उल्लू सीधा करने के लिए भीड़ को एक अराजक ताकत में बदल देते हैं। वे ऐसा इसीलिए कर पाते हैं क्योंकि यह धारणा बनी हुई है कि अगर भीड़ के जरिये कुछ करवा लिया तो किसी का कुछ नहीं बिगड़ेगा। अक्सर ये समाज के ठेकेदार बने होते हैं, जिन्हे पता ही नहीं होता कि वे क्या करने जा रहे हैं? यह एक पागलपन है, एक भयावह अराजकता, जो देश के तमाम हिस्सों में फैलती जा रही है। जाहिर है एक ऐसा वर्ग तैयार हो गया है, जो क़ानून के तंत्र को भी तार-तार करने पर तुला है। इससे भी बड़ी चिंता की बात यह है कि हम सब असहाय से दिख रहे हैं। ऐसे मामले न अदालतों की सख्ती से रुकने वाले हैं, न क़ानून से। कई बार तो पुलिस की मौजूदगी में ऐसी घटनाएँ देखने में आई, जहाँ वह असहाय दिखी या फिर मूक दर्शक। उदाहरण के लिए 6 दिसंबर, 1991 का दिन भारतीय इतिहास का वह काला दिवस है, जब अयोध्या में राम जन्म भूमि विवाद के चलते कार सेवकों की उन्मादी भीड़ ने बाबरी-मस्जिद का विध्वंस किया था।

वास्तव में हमारे तर्क और तकनीक समुदायों और सत्ताधीशों के लिए सहूलियत का सौदा बन गए हैं। इस से सांप्रदायिक शक्तियों को खुलकर खेलने के अवसर लगातार हासिल हो रहे हैं, और वे अपना उल्लू सीधा करने के लिए जब-तब भीड़ के लोगों को अपना मोहरा बना देते हैं। अब सियासत का सामाजिक भावनाओं से खेल बंद करने का वक्त आ गया है, नहीं तो आग से खेलने वाले अहंकारी नेताओं के हाथ ही जल जाएँगे। पिछले दिनों लखीम पुर खीरी में शांतिपूर्ण ढंग से प्रदर्शन करते किसानों पर जिस तरह से हमला हुआ और उसके प्रतिरोध में भीड़ ने जिस तरह प्रतिकार किया, वह एक ज्वलंत विषय है। अब सत्ता के मद में चूर चमचों और गुर्गो द्वारा हिंसा का माहौल बनाकर दहशत पैदा कर के आंदोलन को विफल सिद्ध करना या किसी की हत्या करवा कर अपनी बात मनवाना काफी 'कॉमन' हो गया है। ऐसे में लेखकों और पत्रकारों के साथ भी अभद्रता का आचरण किया जाता है, सत्यता लिखने पर उनसे अपशब्द कहे जाते हैं। प्रसिद्ध साहित्यकार श्री नंद किशोर आचार्य के अनुसार, ''मनुष्य स्वभाव से अनिवार्यतः हिंसक नहीं है। यह बात मनोविज्ञान और तंत्रिका विज्ञान सिद्ध कर चुका है। उसमें आक्रामकता अवश्य है, पर वह हिंसक रूप लेती है अथवा अहिंसक रूप, यह

परिस्थिति प्रेरित वातावरण और उत्तेजनात्मक विश्वासों पर निर्भर करता है। इसीलिए महात्मा गाँधी या उन जैसे अन्य विचारक जब अहिंसा का आग्रह करते हैं, तो वह केवल अंतर्वैयक्तिक आचरण नहीं रहता। वह पूरी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक व्यवस्था को हिंसा मुक्त करने का आग्रह है, यानी समाज को अप्रत्यक्ष प्रकार के उत्पीड़न, शोषण और दमन से मुक्त करना। जिस व्यवस्था में आर्थिक शोषण है, राजनीतिक दमन है और उत्पीड़नमूलक भेदभाव है जैसे दलित-स्वर्ण या स्त्री-पुरुष, श्वेत-अश्वेत, स्वधर्मी-अन्य धर्मी आदि। वह वास्तव में एक हिंसक समाज ही है। राज्य शक्ति का केंद्रीकरण-विकेंद्रीकरण भी इसी हिंसा का ही सूक्ष्म रूप है। गाँधी तो राज्य को भी 'संगठित हिंसा कहते थे।' (लेख : समाधान अब भी गाँधी ही देते हैं, कादंबिनी पत्रिाका, अगस्त 2017)

इसीलिए भीड़ तंत्र के मामलों में प्रशासन के कंट्रोल से ज्यादा सांस्कृतिक परिवर्तनों की जरुरत है, जिसके लिए हमें एक बार फिर महात्मा गाँधी के अहिंसक मार्ग की ओर लौटना होगा। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सत्याग्रह की बात करें तो यह बात विचित्रा लग सकती है। लेकिन मौजूदा स्थिति में भी बापू सत्याग्रह की ही सिफारिश करते और प्रतिक्रिया देने के लिए केवल उसे ही नैतिक व कूटनीतिक जरिया बनाने की पैरवी करते। हिंसा और कलह से भरी आज की परिस्थितियों में आगे बढ़ने का रास्ता एकमात्रा सत्याग्रह के माध्यम से ही बनता नजर आता है। हालाँकि वक्त के तकाजे ने हालातों में बिलकुल बदलाव कर दिया है, अब सत्य ही भ्रामक और आभासी हो गया है। लेकिन हम जो मीडिया या सोशल मीडिया के माध्यम से जो देख रहे हैं, वह भारतीय आबादी का महज दसवाँ हिस्सा है। भारत के गाँवों में बसने वाला आम किसान या श्रमिक अब भी अपने पुश्तैनी संस्कारों और परंपरागत मूल्यों से जुड़ा हुआ है, चाहे उनके युवा वर्ग की जीवन-शैली और पहनावे में थोड़ा अंतर आ गया है। यह फिलहाल स्थगित हुए किसान आंदोलन ने सिद्ध कर दिया है, जिस में 'संयुक्त किसान मोर्चा' ने गांधीवादी अहिंसा और सत्याग्रह के मार्ग पर चलकर 'तीन कृषि क़ानून' को अंततः सरकार से वापिस करवा लिया। एक साल के लंबे समय तक चले इस आंदोलन को आतंकवादी, खालिस्तानी, पाकिस्तानी और न जाने क्या-क्या कहा गया? इस आंदोलन को तोड़ने के लिए न जाने कितने उपक्रम किया गए, लेकिन किसान अपनी अहिंसक नीति पर डटे रहे। यहाँ बौद्ध गुरु श्री सामदोंग रिनपोछे का वक्तव्य उल्लेखनीय है, ''हमारे धर्म ग्रंथों में अहिंसा का व्यापक वर्णन है -- सामाजिक जीवन में अहिंसा के प्रयोग की बात वहाँ नहीं आई। गाँधीजी का इस मामले में विशेष योगदान यह है कि उन्होंने बताया कि अहिंसा को दैनिक जीवन में, सामाजिक जीवन में, राष्ट्र के आंदोलनों में कैसे प्रयोग किया जा सकता है। यह मार्गदर्शन गाँधीजी का समाज के लिए, देश और दुनिया के लिए महान योगदान है।'' (लेख : समाधान तो गाँधी का रास्ता ही है, कादंबिनी पत्रिाका, अंक अक्टूबर 2018)

अंततः एक नजर हम इस वर्ष हुए घटना क्रम पर डालें, फिर उसका तात्विक विशेलषण चौरी-चौरा कांड से करें। 26 जनवरी, 2021 के दिन गणतंत्र दिवस पर दिल्ली में एकत्रिात

भीड़ या अवांछित तत्त्वों द्वारा की गई हरकत ने हमारे सम्मुख कई सवाल खड़े कर दिए। जिस तरह राजधानी में ट्रेक्टरों का रेला और अनियंत्रित भीड़ का जत्था घुसा, वह पुलिस के नियंत्रण से बाहर था। उनका लाल किले की प्राचीर पर चढ़ अपना झंडा फहराना अत्यंत अशोभनीय और अनुशासनहीन कार्य था, जो भीड़ तंत्र पर सवालिया निशान पैदा करता है।

पिछले एक वर्ष से दिल्ली की सीमाओं पर किसानों के धरने के दौरान कुछ अराजक और असामाजिक तत्त्वों ने जो भी वारदात की, उससे आंदोलन की साख को बट्टा लगा। सारे किसान तितर-बितर हो गए, किंतु आखिरकार महात्मा गाँधी द्वारा दिखाया गया आत्मबल का रास्ता ही उनका संबल बना। तो यह सिद्ध है कि गलत नीतियों का शांति पूर्ण अहिंसक विरोध ही आंदोलन को सफल बनाता है, जिसके लिए बहुत धैर्य और सहन शक्ति चाहिए। जैसे चौरी-चौरा कांड के उपरांत असहयोग आंदोलन वापिस लेने के बावजूद भी 10 मार्च, 1922 को गाँधीजी को 'असंतोष भड़काने के अपराध में छह वर्ष की सज़ा सुनाई, आखिरकार हारकर ब्रिटिश हुकूमत ने उन्हें स्वास्थ्य कारणों से 5 फरवरी, 1924 को रिहा कर दिया। अपनों की आलोचना के बाद भी बापू ने सन 1930 में दांडी यात्रा प्रारंभ करने से पूर्व वॉयसराय को अंग्रेज मित्रा के हाथों भेजे गए पत्र में लिखा था, ''अहिंसा एक जबरदस्त सक्रिय शक्ति है। ब्रिटिश सल्तनत की संगठित हिंसा-शक्ति और देश के हिंसक दल की बढ़ती हुई असंगठित हिंसा-शक्ति के मुकाबले में इस जबरदस्त अहिंसक शक्ति को खड़ा करने का मेरा इरादा है। यह अहिंसक शक्ति सविनय अवज्ञा द्वारा व्यक्त होगी। मैं जनता हूँ कि अहिंसात्मक संघर्ष शुरू करके मैं पागलों का-सा साहस कर रहा हूँ, वैसा ही जोखिम उठा रहा हूँ, लेकिन जोखिम उठाए बिना, और अक्सर भारी से भारी जोखिम उठाए बिना, सत्य की कभी जीत नहीं हुई है।''

❑

**संदर्भ**


1. हिंदी हिंदुस्तान अखबार, 25 सितंबर, 2019
2. कादम्बिनी पत्रिका, अगस्त, 2017
3. कादम्बिनी पत्रिका, अक्टूबर, 2018
4. कादम्बिनी पत्रिका, अक्टूबर, 2018

रमेश चंद्र

# विधि और अनुवाद

विधि विशेषज्ञता का एक विशिष्ट क्षेत्रा होता है। यह शब्द, उसके अर्थ, निर्वचन और विधि विशेषज्ञों अर्थात् न्यायाधीशों द्वारा उसकी व्याख्या पर टिका होता है। इसमें शब्द ही प्रधान होता है और ईश्वर होता है अर्थात् इसमें शब्द के अर्थ तथा वाक्य के भाव को बड़ी सूक्ष्मता से और गंभीरता से लिया जाता है। यदि ऐसा न होता, तो कोई भी व्यक्ति किसी भी शब्द का मनमाना अर्थ निकाल लेता और तब विधि नाम की कोई चीज नहीं रह गई होती। यह बात विधि के केवल अंग्रेजी शब्दों के बारे में ही नहीं, वरन् हिंदी शब्दों के बारे में भी सही है।

भारत में विधि का निर्माण प्रथमतः अंग्रेजी में होता है। हिंदी में उसका अनुवाद होता है। फिर भी हिंदी में भी उसके शब्द की आत्मा की रक्षा करनी होती है। इसलिए विधि के अनुवाद का क्षेत्रा अन्य प्रकार के अनुवादों से नितांततः भिन्न होता है। उदाहरण के लिए कार्यालयी सामग्री के अनुवाद में केवल भाव की रक्षा करनी होती है, उसमें शब्द की जगह शब्द का अनुवाद करने की आवश्यकता नहीं होती। धार्मिक सामग्री के अनुवाद में धर्म में निहित तत्वों और संकल्पनाओं अर्थात् भावना को प्रधानता दी जाती है। साहित्यिक सामग्री के अनुवाद में भाव को प्रधानता दी जाती है। वैज्ञानिक एवं तकनीकी सामग्री में शब्द को पकड़ा जाता है और भाव को छोड़ा दिया जाता है। इसमें पूरे का पूरा शब्द ही अपने निहितार्थ के साथ परावर्तित होता है और वही निराकार भाव की अगोचर दृश्यावली से ऊपर उठकर अनुवाद रूपी ब्रह्मांड में साकार रूप में विचरण करता है। तब शब्द यथारूप, यथा-अर्थ गोचर होता है और उसका काई भाव, पर्याय, छटा, तात्पर्य या अभिप्राय नहीं होता। उसका केवल अर्थ होता है और वह अर्थ भी एक ही होता है। शब्द के अर्थ में जो कुछ होता है वह साकार होता है और उस अर्थ की शक्ति भी छद्म नहीं होती, बल्कि प्रकट होती है। इस अर्थ की दिशा और दशा भी एक ही होती है। यह अर्थ कुशल तीरंदाज के तीर की भाँति लक्ष्य के वांछित स्थल को ही भेदता है। विधि के अनुवाद में मूल विचार-बिंदु कोई वाक्य या कथन नहीं होता, शब्द ही होता है और शब्द ही विचार और अनुवाद का केंद्र तथा सूत्राधार होता है। इस प्रकार विधि में शब्द ही विधि का नियंता होता है। उसमें शब्द की शक्ति ही नियम या अधिनियम होती है और उसका अर्थ ही उसका मार्गदर्शक होता है। यह शब्द-शक्ति कोई व्यंजना या लक्षणा

नहीं होती, केवल अभिधा होती है और इस अभिधा में ही लक्षणा या व्यंजना से भी अधिक एवं निश्चित मारक-शक्ति होती है। शब्द की इस शक्ति से न्यायिक प्रशासन जितना प्रभावित रहता है, उसके ज्वलंत उदाहरण न्यायालयों में लंबी-चौड़ी बहस के बाद किसी शब्द विशेष की व्याख्या के फलस्वरूप मुकदमे की हार-जीत से देखे जाते हैं। शब्द की इस शक्ति से न्याय को अनुशासित रखने में सहायता मिलती है।

विधि में प्रयुक्त शब्द अतिव्याप्ति और अल्पव्याप्ति जैसे दोषों से भी मुक्त होते हैं। विधि के अनुवाद के समय अनुवादक को पर्याय चयन की स्वतंत्रता न होने के कारण वह सामान्य भाषा के अप्रचलित परंतु विधि के क्षेत्रा में रूढ़ हो चुके शब्दों का प्रयोग करता है। विधि के क्षेत्रा में शब्दों के चयन का महत्त्व इस कारण भी अधिक होता है कि इस क्षेत्रा में पारिभाषिक शब्दों का निर्धारण कई बार न्यायालय स्वयं ही करता है, जिसके फलस्वरूप अधिकारों का सृजन और क़ानूनों का अधिनियमन होता है। विधि के कुछ शब्दों की परिभाषा तो नियमों एवं अधिनियमों में ही दी हुई होती है, जिस कारण वे उन नियमों एवं अधिनियमों का अंग बन जाते हैं और विधि में उन्हीं शब्दों का प्रयोग अनिवार्य हो जाता है। इस प्रकार न्याय और विधि की व्याख्या न्यायिक प्रशासन का मुख्य कार्य होता है। चूँकि न्याय का निर्णय विधि की व्याख्या के अनुसार ही किया जाता है और विधि की व्याख्या शब्दों में निहित अर्थ के अनुसार की जाती है, इसलिए विधि की भाषा का अर्थ सहज, सुस्पष्ट एवं सशक्त होता है। इसी कारण विधिक वाक्यावली को अलंकारों, मुहावरों, छंदों, वृति आदि से अलंकृत नहीं किया जाता। इसके एक ही वाक्य में उपवाक्य चाहे जितने हो सकते हैं, परंतु उसका अर्थ निश्चित होता है तथा अर्थ-निर्धारण में विरामादि चिह्नों का भी पर्याप्त महत्त्व होता है।

इस प्रकार विधि का अनुवाद शब्दों का कोई मनमाना विधान नहीं होता, बल्कि पूर्व निश्चित शब्दावली और वाक्यावली से निहित होता है। ऐसा न्याय के शासन में विश्वास बनाए रखने के लिए किया जाता है। विधि के क्षेत्रा में संकल्पनाओं की प्रधानता होती है। संकल्पनाएँ कोई वस्तु या पदार्थ नहीं होतीं, बल्कि किसी विषय विशेष के बारे में कोई भावधारा होती हैं। इनका प्रयोग दीर्घकालीन परंपरा के बाद किया जाता है।

विधि के अनुवाद में केवल नियमों, अधिनियमों आदि का अनुवाद ही नहीं होता, बल्कि उनके संशोधनों का अनुवाद भी शामिल होता है। जहाँ नियमों, अधिनियमों के अनुवाद के समय पूरा वाक्य सामने आता है और उसका उसी प्रकार अनुवाद हो जाता है, वहाँ संशोधनों के अनुवाद के समय पूरे वाक्य की बजाय उसका कुछ अंश ही सामने होता है। परंतु भाषा की संरचना में अंतर के कारण इन संशोधनों का अनुवाद बड़ी सावधानी से करना होता है, क्योंकि जो शब्द अंग्रेजी वाक्य के आरंभ, मध्य या अंत में आएँ, यह जरूरी नहीं कि वे हिंदी वाक्य में भी उसी जगह आएँ। उदाहरणार्थ यदि अंग्रेजी संशोधन सामग्री "following words may be added at the beginning of clause 7" का अनुवाद यदि ‘‘खंड 7 के आरंभ में निम्नलिखित शब्द

जोड़े जाएँ" कर दिया जाए, तो संशोधन का अनुवाद तो हो जाएगा, लेकिन उससे संशोधन का प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा।

एक प्रश्न यह भी उठ सकता है कि विधि के अनुवाद में किसी शब्द का अनुवाद छोड़ा जा सकता है या नहीं या उसकी जगह दो-तीन शब्दों का प्रयोग किया ज सकता है या नहीं? वास्तव में विविध सामग्र में प्रारूप का बड़ा महत्त्व होता है और विधि के प्रारूप में शब्द विधिवेत्ताओं द्वारा चुन-चुन कर रखे जाते हैं। इसी प्रारूप को बाद में विधानपालिका/संसद द्वारा बड़ी लंबी-चौड़ी बहस के बाद पास किया जाता है और बाद में राज्यपाल/राष्ट्रपति द्वारा अनुमोदित किया जाता है। इतनी लंबी प्रक्रिया से गुजरने के बाद इसमें किसी भी व्यक्ति या अनुवादक द्वारा कोई संशोधन नहीं किया जा सकता। इसमें कोई भी संशोधन इसी प्रक्रिया को दुहरा कर ही किया जा सकता है। अतः विधि के अनुवाद में अपनी ओर से न कुछ जोड़ा जा सकता है, न कुछ छोड़ा जा सकता है।

भारत में विधि में ऐसी अनेक संकल्पनाएँ हैं, जिनको प्रकट करने वाले शब्द अन्य देशों की विधियों के लिए गए हैं। ऐसे शब्द भारतीय भाषाओं में घुल-मिल नहीं सकते। राजभाषा (विधायी) आयोग तथा राजभाषा विधायी खंड द्वारा तैयार की गई विधि शब्दावली को आधर मानते हुए ऐसी संकल्पनाओं और विधि में अन्य शब्दों के पर्यायों का निश्चय करने के लिए निम्नलिखित सिद्धांत अपनाए जाते हैं :

1. वस्तु के नाम को प्रकट करने वाले और दिन-प्रतिदिन में आने वाले अन्य भाषाओं के शब्दों (जैसे पेंसिल, बटन, प्लेटफार्म) का अनुवाद न करके उनका देवनागरी लिप्यंतरण करना चाहिए।
2. एक संकल्पना के लिए एक ही पर्याय का प्रयोग करना चाहिए।
3. परस्पर संबंधित संकल्पनाओं में भिन्नता प्रकट करने के लए उपसर्ग का प्रयोग करना चाहिए अथवा धातु में भेद करके शब्द-रचना करनी चाहिए। जैसे survey के लिए सर्वेक्षण; prospect के लिए पूर्वेक्षण, ispection के लिए निरीक्षण, superintendence के लिए अधीक्षण, test के लिए परीक्षण, revision के लिए पुनरीक्षण और review के लिए पुनर्लेखन।
4. किसी शब्द का पर्याय संस्पर्शी शब्दों पर एक साथ विचार करके ही स्थिर करना चाहिए। ऐसा करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि अंग्रेज़ी के प्रत्येक पारिभाषिक शब्द के लिए हिंदी में भी एक शब्द हो। जैसे lapse के लिए गतावधि होना, expire के लिए समाप्त होना, defer के लिए अस्थगित करना, postpone के लिए स्थगित करना, cancel के लिए रद्द करना, reject के लिए निरस्त करना, abrogate के लिए निराकरण करना, repeal के लिए निरस करना, rescind के लिए विखंडित करना, supresede के लिए अधिक्रमित करना, annul के लिए बातिल करना और quash के लिए अभिखंडित करना।

5. एकाधिक पारिभाषिक अर्थ दर्शाने वाले शब्दों का प्रयोग प्रसंगानुसार करना चाहिए, जैसे interest (हित, ब्याज), constitution (संविधान, गठन), charge (भार, आरोप, भारबोधन, भारसाधन) आदि, आदि।
6. भारतीय भाषाओं में प्रचलित शब्दों का ही प्रयोग करना चाहिए।
7. अंग्रेजी में निकट अर्थ वाले दो या दो से अधिक शब्द होने पर उनकी अर्थ-छाया को प्रकट करने के लिए हिंदी में अलग-अलग शब्द रखने के लिए संविधान के अनुच्छेद 351 के अनुसार मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भारतीय भाषाओं से शब्द ग्रहण करने चाहिए यथा mortgage के लिए बंधक (हिंदी), pledge के लिए गिरवी और hypothecation के लिए आडमान (तमिल)।
8. आवश्यकतानुसार अंग्रेजी, अरबी-फारसी के मूल शब्द अपना लेने चाहिए यथा मजिस्ट्रेट, समन, वारंट (सभी अंग्रेजी) और अर्जी, असर, असली, इन्कार (सभी अरबी-फारसी),
9. अन्य भाषाओं के शब्दों के व्याकरणिक रूप और उनसे व्युत्पन्न शब्द हिंदी व्याकरण के अनुसार बनाने चाहिए, यथा cancellation (रद्दकरण), appeal (अपील), appellant (अपीलकर्ता), appeallate (अपीली) और appealable (अपीलीय),
10. अंग्रेजी के समासरहित शब्द का अनुवाद यथासंभव हिंदी के समासरहित शब्द से ही करना चाहिए यथा jurisdiction (अधिकारिता, न कि क्षेत्राधिकार या अधिकार-क्षेत्रा), promotion (प्रोन्नति, न कि पदोन्नति) तथा injunction (व्यादेश, न कि निषेधाज्ञा)।
11. भारत के प्राचीन वाङ्मय में उपलब्ध शब्दों का यथासंभव प्रयोग करना चाहिए, यथा resjudicate के लिए पूर्व न्याय या प्राङ्न्याय (मिताक्षर से), witness के लिए साक्षी (स्मृतियों से) और force के लिए बल (अर्थशास्त्रा से)।
12. अंग्रेजी शब्द का पर्याय निर्धारित करते समय यह भी देख लेना चाहिए कि उससे वे सब व्युत्पन्न शब्द बन सकते हैं या नहीं, जो अंग्रेजी के शब्द से व्युत्पन्न होते हैं, उदाहरणार्थ - law (विधि), lawful (विधिवत्, विधिसंगत), lawless (विधिविहीन), unlawful (विधिविरुद्ध), legal (वैध), illegal (अवैध), legality (वैधता), legislation (विधान), legislative (विधायी), legislator (विधायक), legislature (विधानमंडल), legitimate (धर्मज, विधिसम्मत, विधिसंगत) और illegitimate (अधर्मज),
13. विदेशी शब्द अपनाते समय उसका आवश्यकतानुसार अनुकूलन करना चाहिए, जैसे proxy (परोक्षी), quarantine (करंतीन), interim (अंतरिम)।
14. केवल पारिभाषिक शब्दों और पदों के समानार्थी शब्द या पद ही तय करने चाहिए, सामान्य रूप से प्रचलित शब्दों और पदों का प्रयोग यथावत् करना चाहिए।

❑

सन्तोष खन्ना

# मुस्लिम महिलाएँ और समान नागरिक संहिता

मुस्लिम महिला आंदोलन की सह संस्थापक ज़किया सोमन ने 1 सितंबर, 2022 को अंग्रेजी के समाचार-पत्र 'हिंदुस्तान टाइम्स' में अपने एक आलेख 'मुस्लिम पर्सनल कानून में सुधार की जरूरत' में लिखा है कि यद्यपि उच्चतम न्यायालय ने वर्ष 2017 में तीन तलाक को ग़ैर-कानूनी घोषित कर दिया था और संसद ने उसके लिए मुस्लिम महिला (विवाह अधिकार संरक्षण) अधिनियम, 2019 बनाकर उसे लागू कर दिया था और इस कानून के लागू होने के बाद तीन तलाक के अंतर्गत मामलों में कमी आई है, फिर भी मुस्लिम पुरुषों ने तलाक देने के लिए अन्य तरीके अपनाने शुरू कर दिए हैं।

एक मुस्लिम महिला बेनजीर हिना को इसी वर्ष 20 जून को तलाक-ए-हसन के अंतर्गत तलाक देने का नोटिस दिया गया। इस तलाक-ए-हसन के अंतर्गत मुस्लिम पुरुष तीन महीने लगातार तलाक का नोटिस देकर अपनी पत्नी को तलाक दे सकता है। बेनजीर हिना को भी तीसरा नोटिस देकर उसके पति ने उसे तलाक दे दिया है। बेनजीर हिना ने पति से तलाक-ए-हसन के अंतर्गत पहला नोटिस मिलने के 7 दिन बाद उच्चतम न्यायालय में एक जनहित याचिका दायर कर कहा था कि तलाक-ए-हसन पर भी प्रतिबंध लगना चाहिए। उच्चतम न्यायालय ने यह कहते हुए उसे कोई राहत नहीं दी कि प्रथम दृष्टि में तलाक-ए-हसन अनुचित प्रतीत नहीं होता क्योंकि मुस्लिम महिलाओं को भी 'खुला' के अंतर्गत तलाक देने का विकल्प मिला हुआ है। उच्चतम न्यायालय में इस प्रावधान की संविधानिकता संबंधी याचिका पर सुनवाई की जा रही है। उच्चतम न्यायालय पहले हसन-ए-तलाक की वैधता पर विचार करेगा।

तीन तलाक पर बने क़ानून से मुस्लिम महिलाओं को कुछ राहत मिली है किंतु इसके परिणामस्वरूप मुस्लिम पुरुष तलाक के लिए तलाक-ए-हसन का रास्ता अपना रहे हैं इसलिए महिलाओं के विवाह संबंधी अधिकारों को सुरक्षित करने के लिए जरूरत इस बात की है कि मुस्लिम पर्सनल (शरीयत) एप्लीकेशन एक्ट, 1937 में संशोधन किया जाए क्योंकि इसमें विवाह, तलाक आदि के लिए दिए गए प्रावधान मुस्लिम महिलाओं के साथ न्याय नहीं करते हैं।

ज़किया सोमन इससे आगे बढ़कर यह भी माँग करती है कि जिस प्रकार हिंदू महिलाओं के लिए हिंदू कोड बनाया गया है उसी आधार पर मुस्लिम महिलाओं के लिए मुस्लिम कोड बना होना चाहिए। दूसरे शब्दों में, वह यह कहना चाहती हैं कि समूचे देश में एक समान नागरिक संहिता लागू की जानी चाहिए।

इससे पहले उच्चतम न्यायालय बार-बार इस बात पर बल देता आ रहा है कि संसद को समुचित कानून बनाकर देश में समान नागरिक सिविल कोड लागू करना चाहिए क्योंकि भारत के संविधान के भाग 4 में नीति निदेशक तत्त्वों के अनुच्छेद 44 में समान नागरिक संहिता लागू करने के लिए कहा गया है। समान नागरिक संहिता से अभिप्राय यह है कि इसमें धर्म, जाति, लिंग आदि के आधार पर किसी के साथ भी भेदभाव नहीं किया जा सकता है।

देश स्वतंत्रता प्राप्ति का अमृत महोत्सव मना रहा है परंतु इन 75 वर्षों में उच्चतम न्यायालय के बार-बार आदेश दिए जाने और देशवासियों की माँग के बावजूद संसद ने अभी तक समान नागरिक संहिता लागू करने के लिए कोई कानून बनाने का कोई क़दम नहीं उठाया है। इसका कारण यह है कि जब भी समान नागरिक संगीता लाने की मांग की जाती है तो मुस्लिम पक्ष इसका घोर विरोध करने लगता है और मुस्लिम महिला के इन मौलिक अधिकारों के संबंध में वह अपने मज़हब को ले आते हैं और इस प्रकार मुस्लिम महिलाएँ अपने अधिकारों से वंचित रह जाती हैं क्योंकि मुस्लिम पुरुष वर्ग अपने हित में महिलाओं को कोई अधिकार नहीं देना चाहते हैं। जब भी मुस्लिम वर्ग की महिलाएं भी समान नागरिक संहिता की माँग करती हैं तो मुस्लिम समाज इस्लाम ख़तरे में आ जाएगा कहकर मुस्लिम महिलाओं को उनके अधिकारों से वंचित करते आ रहे हैं जबकि इस्लाम धर्म के संस्थापक मोहम्मद साहब ने 1400 वर्ष पहले ही महिलाओं को समान अधिकार देने की वकालत की थी। कुरान में मुस्लिम महिलाओं को मिले अधिकारों के बावजूद मुस्लिम वर्ग में मुस्लिम दकियानूसी तत्त्व शरिया कानून अथवा अन्य नियमों को मनमाने ढंग से लागू करते हैं और मुस्लिम पुरुष को निरंकुश अधिकार मिले हुए हैं। मुस्लिम समाज में पितृसत्तात्मक समाज और वोट बैंक की राजनीति मुस्लिम महिलाओं को बराबर उनके अधिकारों से वंचित करती आ रही है अब आशा की किरण एक यही है कि उच्चतम न्यायालय मुस्लिम महिलाओं के अधिकारों पर कई प्रकार की जनहित याचिकाओं पर सुनवाई कर रहा है। आशा है वह इस्लामी कानूनों की रचनात्मक रूप से व्याख्या कर मुस्लिम महिलाओं के अधिकारों को सुनिश्चित कर उन्हें न्याय दिलाने का प्रयास करेगा। वर्तमान में मुस्लिम महिलाओं में संचारित होती चेतना भी अपना साकार रूप अवश्य दिखाएगी।

❑

## संदर्भ

1. भारत का संविधान, अनुच्छेद 44
2. मुस्लिम महिला (विवाह अधिकार संरक्षण) अधिनियम, 2019
3. Hindustan Times 1 September, 2022 , 'Muslim Personal Law Needs to be rehauled', Zakia Soman
4. Muslim Personal (Shariat) Application Act, 1937
5. Muslim Women (Protection of Rights on Divorce), 1986

नरेंद्र मोदी
अनुवाद : रश्मि भारद्वाज

# कारगिल

पहले भी क्या था कारगिल
देखा था टाइगर हिल पहले भी
उसकी पवित्र भव्य शांति में जाना हुआ
आज
हर शिखर प्रतिध्वनित है
हिम और राइफल के स्वर से
हिम मंडित पर्वतों पर
धधकती हैं ज्वालाएँ
स्वर्णिम सैनिक

हर सैनिक एक कृषक है यहाँ
अपने वर्तमान को रोपता है
रक्त से उसे सींचता है
ताकि नहीं मुरझाए भविष्य

हर सैनिक की आँख में
मैंने पाए हैं लाखों स्वप्न
उनकी पलकों पर टिकी हुई मृत्यु
मैंने देखा मृत्यु के देवता को
चूमा इन सूरमाओं के पाँवों को
देखा बर्फ की सिल्लियों पर रखी
उनकी सख्त पड़ गई देहों को
वे शीत जलधारा में अपने निशान छोड़ते
बह चले
अब जब राष्ट्र विदाई है देता
उन देशभक्तों को
गाते हुए
सुजलाम
सुफलाम
यह देश
यह जलधारा
गाते हैं साथ
वंदे मातरम्
वंदे मातरम्।

❑

नरेंद्र मोदी
अनुवाद : रश्मि भारद्वाज

# वंदे मातरम्

वंदे मातरम्
नहीं है एक गीत
यह है हमारी आन
स्वतंत्रता यही
दी गई हमारी आहुति
जागृत करता है यह
गणतंत्र दिवस मनाता है उत्सव
चिर स्पंदित हृदय का
हमारा अद्‌भुत परिचय

प्रकाश पुँज है 1857
सत्य करता है आरोहण
और रक्त होता है प्रवाहित
निरंतर

वंदे मातरम्
नहीं है एक शब्द
यह एक मंत्र है
है ऊर्जा
और स्पंदन
हमारी स्वतंत्रता का
हमारी उन्नति का
भव्य मार्ग
राष्ट्र के लिए
हमारी प्रतिबद्धता
प्रत्येक विहान
मेरे सार्वजनिक जीवन का
है एक आमंत्रण
प्रबोधन का
वंदे मातरम्।

❑

नरेंद्र मोदी
अनुवाद : रश्मि भारद्वाज

## प्रेम

मेरा प्रेम है
किसी जलधार की तरह
अबाध
मैं रिश्तों में नहीं चाहता वायदे
वे मुझे अधीर करते हैं

रात भर बरसे ओस की तरह
सहज नहीं है मेरे प्रेम को बाँधना

नहीं समेटी जा सकती हैं
सूर्य-रश्मियाँ बंद मुट्ठियों में
बहती हवा नहीं हो सकती है कैद

किसी पिंजड़े में
बादलों की तरह बेफिक्र
मेरा प्रेम
नहीं समा सकता है कहीं

कुहासा छाता है, छंट जाता है
नहीं छिपा सकता वह सूर्य का प्रकाश
नहीं बाँधा जा सकता
मेरा प्रेम

गूँथा नहीं जा सकता मोतियों की तरह
वह तैरता है निर्द्वंद्व
किसी राजहंस की तरह

मेरा प्रेम है किसी जलधार की तरह अबाध।

❑

## यात्रा

मैं जा सकता हूँ अपने अतीत में
दूर, बहुत दूर
और पहचान सकता हूँ हर चेहरा
अलग से

उन स्मृतियों को याद करते हुए
नहीं पड़ता मस्तिष्क पर कोई जोर
मैं देखता हूँ उन्हें स्पष्ट
और गुनता हूँ
कुछ भी अव्यवस्थित नहीं
सत्य तो यह है कि
जिनके साथ आपने कष्ट सहे
वे रहते हैं अविस्मृत
साथ झेली गई पीड़ाएँ
अंततः
ढल जाती हैं यात्राओं में
मैं अपने अतीत में कर सकता हूँ
यात्राएँ
दूर बहुत दूर।

❑

## विज्ञान व्रत

# ग़ज़ल

(1)

मैं जब खुद को समझा और
मुझमें कोई निकला और

यानी एक तजुरबा और
फिर खाया इक धोखा और

होती मेरी दुनिया और
तू जो मुझको मिलता और

मुझको कुछ कहना था और
तू जो कहता अच्छा और

मेरे अर्थ कई थे काश
तू जो मुझको पढ़ता और

❑

(2)

पास आना चाहता हूँ
बस बहाना चाहता हूँ

आप से रिश्ता नहीं तो
क्या निभाना चाहता हूँ

सिर्फ मुझसे ही रहे जो
वो जमाना चाहता हूँ

काश खुद भी सीख पाता
जो सिखाना चाहता हूँ

जो मुझे हैं याद उनको
याद आना चाहता हूँ

❑

डॉ. कीर्ति गोयल

# कर्मठता में अनुकरणीय डॉ. संतोष खन्ना जी

चेहरे पर मुस्कुराहट के साथ सौम्यता और सहजता संजोये डॉ. सन्तोष खन्ना मैम से पहली बार मिलने पर कोई भी उनके व्यक्तित्व से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। यूँ तो मैम से काफी दिनों से परिचय रहा है तथा वर्ल्ड रिकॉर्ड ब्रेकिंग वाली एक पुस्तक में उनके साथ सह-लेखिका होने का सौभाग्य मिला था और उसी सिलसिले में कई बार फोन पर एवं पत्राचार के माध्यम से बातचीत हुई लेकिन मिलना अभी कुछ दिन पहले ही हुआ। हमें विधि भारती परिषद् द्वारा दिल्ली में हिंदी भवन में आयोजित किए जा रहे एक सम्मान समारोह में मिलना था जिसकी व्यवस्था मैम ने ही की थी। समारोह से 4-5 दिन पहले बातों-बातों में फोन पर मैंने पूछा 'मैम कैसा महसूस हो रहा है? देश दुनिया से लोग आ रहे हैं तो बहुत तैयारियाँ करनी पड़ रही होंगी?'

इस प्रश्न के उत्तर में मैंने उनके आवाज की खनक महसूस करी। वह बोली 'कीर्ति, मैं अपने आप को समारोहमयी महसूस कर रही हूँ। ऐसा लग रहा है इस समारोह की तैयारियों के साथ मैं उसी रंग में रंग गई हूँ। जल्दी मिलते हैं, आइए आप। आपको इस कार्यक्रम के एक भाग के संचालन का दायित्व भी संभालना है।'

अब आप पाठक ही बताएँ कि जब इतना स्नेह भरा निमंत्रण हो और आप पर इतना विश्वास जताया गया तो कौन होगा जो इतना स्नेह और सम्मान मिलने से स्वयं को सौभाग्यशाली न समझेगा। सभी अतिथियों से मिलने की अधीरता और उत्सुकता आयोजक की आवाज की खनखनाहट से पता चलती हो, तो कोई बिरला ही होगा जो वहां जल्दी से जल्दी पहुँचने की भावना से ओतप्रोत न हो जाएगा।

और हुआ भी कुछ ऐसा ही। दूर-दूर से लोग इस सम्मान समारोह का हिस्सा बनने के लिए पहुँचे भी। सभी उसी स्नेही आग्रह पर ही पहुँचे। त्रैमासिक पत्रिका 'महिला विधि भारती' की प्रधान संपादक, सुप्रसिद्ध साहित्यकार, कवयित्री, लेखिका और चिंतक डॉ. सन्तोष खन्ना जी का कुछ ऐसा व्यक्तित्व है। वे संसद से अधिकारी, राष्ट्रीय महिला आयोग से कंसल्टेंट के पद से सेवानिवृत्ति के बाद उपभोक्ता फोरम में जज के रूप में अपनी सेवाएँ दे चुकी हैं। साथ ही भारतीय अनुवाद परिषद् की भी हर गतिविधि में सक्रिय हैं चाहे उनकी पत्रिका का संपादन हो, अनुवाद हो अथवा वहाँ पढ़ाना हो। वर्तमान में 'इग्नू' ( इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय) में काउंसलर भी हैं। उनके पाँच काव्य-संग्रह, 3 हिंदी नाटक, एक उपन्यास,

एक कहानी-संग्रह, समालोचना और अनुवाद विषय पर एक-एक पुस्तक तथा विधि विषयों पर 5 पुस्तकों समेत 18 मौलिक पुस्तकें तथा विभिन्न विषयों पर 15 संपादित पुस्तकें प्रकाशित हैं। वर्ष 2021 में उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान से विधि भूषण पुरस्कार सहित अनगिनत सम्मानों से सुसज्जित डॉ. सन्तोष खन्ना जी हिंदी की सुधी आलोचक, कवयित्री एवं भाषाविद् हैं।

कोई भी लेख अथवा साहित्य कैसा लिखा गया है इसका सीधा संबंध उसके रचयिता के व्यक्तित्व से होता है। एक अमूर्त विचार को मानवीय गुण दे कर साहित्यकार अपनी रचना को सरल और सुग्राहय रूप में लोगों के सामने प्रस्तुत करता है। इस तथ्य का सबसे बेहतरीन उदाहरण है डॉ. सन्तोष खन्ना मैम। लगभग 35 वर्षों के अपने सरकारी कार्यकाल से सेवानिवृत्त होने के बाद पिछले 28 वर्षों से निरंतर प्रकाशित हो रही 'महिला विधि भारती' त्रैमासिक पत्रिका की संस्थापक संपादक हैं। इस पत्रिका का मुख्य ध्येय आम लोगों और महिलाओं को उनके अधिकारों से परिचित कराना है। साहित्य को प्रश्रय देने के कारण विधि भारती परिषद का साहित्यिक स्वरूप भी आकार ले रहा है तो साथ ही देश के विभिन्न शिक्षण एवं अन्य संस्थानों के पुस्तकालयों में पत्रिका और पुस्तकें पहुँचने से उनका एक बड़ा पाठक वर्ग भी है।

ऐसा नहीं है कि डॉ. सन्तोष खन्ना मैम के जीवन की यात्रा बहुत आसान रही हो, फिर भी टूट कर बिखरने, खुद को एकत्रित कर, बनते-सँवरते सृजनात्मकता को अपना कर साहित्यिक मार्ग प्रशस्त किया। शिशु सामान उत्सुकता और उत्साह उनके चेहरे पर बात करते हुए साफ झलकती है। प्रस्तुत है डॉ. सन्तोष खन्ना मैम के साथ बातचीत के कुछ अंश --

**प्रश्न :** (1) आपका शुरुआती जीवन कैसा रहा?

**उत्तर :** भारत के जिस भाग में जन्म हुआ, वह विभाजन के बाद पाकिस्तान बन गया। 1947 में विभाजन के बाद अपना घर बाहर सब कुछ छोड़ पाकिस्तान कहलाने वाले भारत का भू-भाग छोड़ पैदल काफिले के साथ अपने इस भारत में आना पड़ा। उनके परिवार का शुरुआती समय बहुत संघर्षमय रहा। किसी प्रकार बिना शिक्षण सुविधाओं के दसवीं पास कर विवाह के बाद दिल्ली आ गई। जीवन संघर्ष ने शिक्षा का महत्व बखूबी समझाया। विवाह के बाद टाइपिंग सीखनी शुरू कर दी। सोच यह थी कि किसी भी तरह नौकरी मिल जाए। शुरुआती कई साल आकाशवाणी में नौकरी करी साथ-साथ संध्या कक्षाओं के द्वारा अपनी पढ़ाई जारी रखी। हिंदी और अंग्रेजी दोनों विषयों में दिल्ली विश्वविद्यालय से अपनी स्नातकोत्तर करने के साथ ही मेरा चयन संसद में हो गया और बाद में दिल्ली विश्वविद्यालय से ही एल.एल.बी भी की।

**प्रश्न :** (2) संसद में नौकरी के साथ-साथ आपकी लेखन में किस तरह रुचि जागी?

**उत्तर :** पढ़ने और लेखन में सदा से ही रुचि थी मेरी। सबसे पहली कहानी 'समाधि का फूल' प्रकाशित हुई तो लोग हैरान रह गए की 'अरे यह लिख भी सकती हैं क्या?' फिर हँसते हुए मैम कहती हैं कि मेरी कई कहानियों, कविताओं की भ्रूण हत्या हुई है मेरे काम के कारण। संसद की अपनी एक कार्यशैली है जो बहुत मेहनत माँगती है और आप उस मेहनत से किसी भी तरह बच नहीं सकते। पर फिर इस बात का एक सकारात्मक पहलू यह भी

है कि मैं इतनी ज्यादा मेहनत करना सीख गई कि वह मेहनत मेरे जीवन का अभिन्न हिस्सा बन गई। कभी ऐसा लगा ही नहीं कि बहुत काम है। इस मामले में मैं अपने आप को ईश्वर की सबसे प्रिय बच्चों में गिनती हूँ कि उसने मुझे संसद में कार्य करने का मौका दिया और वहां की कार्य संस्कृति ने परिश्रम करने का अभ्यस्त बनाया।

**प्रश्न :** (3) विधि भारती परिषद् किस तरह अस्तित्व में आई?

**उत्तर :** भारतीय अनुवाद परिषद में मैं लगातार सक्रिय थी। परिषद की संस्थापिक डॉ. गार्गी गुप्ता एवं कुछ अन्य के सहयोग के साथ परिषद काफी पुख्ता धरातल पर आ चुकी थी। संसद में मेरा सेवानिवृत्ति काल समीप आ रहा था। तब मेरे मन में ख्याल आया कि अधिकतर लोग अपने अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं है। चारों तरफ देखने पर लगा कि हिंदी में कोई भी इस तरह की पत्रिका नहीं है जो लोगों को उनके अधिकारों के बारे में सूचित करें। संसद के कार्यकाल के दौरान देश के लोगों द्वारा भोगे जा रहे दुख दर्द संबंधी समस्याओं को सुनकर मेरा लेखकीय संवेदनशील मन और अधिक संवेदनशील होता जा रहा था। एक अनकहा अनचाहा-सा तनाव जिसे मैं अपनी कविताओं कहानियों के माध्यम से व्यक्त भी करती थी लगातार बना रहता। मुझे ऐसा महसूस हुआ कि देश की जनता विशेष रूप से महिलाएँ और दलित वर्ग का सशक्तिकरण इस प्रकार से हो कि वह स्वयं के भाग्य विधाता बने तथा अपने अधिकारों के बारे में जाने। उनमें कानूनी जागृति पैदा हो। जनता को अपने अधिकारों का ज्ञान हो। इस सोच और विचार के साथ विधि भारती परिषद अस्तित्व में आई।

**प्रश्न :** (4) चाहे साहित्य हो, विधि का क्षेत्र हो अथवा अनुवाद का, आप हर क्षेत्र में कमाल काम कर रहीं हैं। किस तरह सामंजस्य बिठा पातीं है आप?

**उत्तर :** हाथ में लेने वाले हर काम के ऊपर अपना ध्यान हमेशा केंद्रित रखा। बहुत अधिक योजनाएँ नहीं बनाई परंतु अपना सर्वोत्तम देने की कोशिश की जिस भी कार्य को किया। ईश्वरीय प्रेरणा और उसके दिशा निर्देशन के साथ साथ काम करती चली जाती हूँ। आज यदि मैं पीछे मुड़कर सोचती हूँ तुम मुझे खुद पर आश्चर्य होता है और यह यकीन होता है कि यह कोई ईश्वरीय शक्ति ही थी जो मुझसे सभी काम संपन्न कराती गई।

**प्रश्न :** (5) क्या आपके बेटे को भी यह सृजनात्मकता विरासत में मिली है?

**उत्तर :** जी निश्चय ही। क्योंकि वह एक सर्जन है तो उसकी सृजनात्मकता उसके कार्यक्षेत्र में है और वह बेहतरीन कार्य भी कर रहा है। न जाने कितने अनगिनत लोगों की जान बचा कर नया जीवन दिया है जिसका वह श्रेय नहीं लेता है। अपितु अपने आप के लिए यह ईश्वर का आशीर्वाद मान कर चलता है कि वह माध्यम बन पाया लोगों को रोग मुक्त करने के लिए। वह एक बहुत अच्छा शिक्षक भी हो सकता है।

**प्रश्न :** (6) हाल ही में आपने एक नया विश्व कीर्तिमान रचा है। आपके द्वारा संपादित पुस्तक 'काव्य सलिला' जिसमें आपने लेखन भी किया है इसके बारे में हमें बताएं।

**उत्तर :** भारत के 59 रेमन मैग्सेसे पुरस्कार प्राप्तकर्ताओ पर शोध-परक काव्य-संग्रह 'काव्य सलिला' में देश-विदेश के 59 कवियों ने अपना योगदान दिया है। इस पुस्तक को 'वर्ल्ड बुक

ऑफ रिकॉर्ड्स, लंदन' के द्वारा गोल्ड एडिशन प्राप्त हुआ है। यह एक रिकॉर्ड ब्रेकिंग परिघटना है। यानी हमने एक विश्व कीर्तिमान स्थापित किया है। यह अपने आप में इसलिए भी विशिष्ट है क्योंकि इस तरह का काम पहले कभी विश्व की किसी भी भाषा में नहीं हुआ है। 'काव्य सलिला' के पीछे यह संकल्पना थी कि कुछ ऐसा किया जाए जिससे जो भारत के मनीषी, विद्वान है जिन्होंने अपने क्षेत्र में विशिष्ट उपलब्धियां प्राप्त की है और जिसके लिए उन्हें अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहचान मिली है उनकी उपलब्धियों को हम प्रमुखता से प्रदर्शित करें। यह गद्य और पद्य दोनों रूप में लिखी गई है। एशियाई देशों के मनीषी जिन्होंने अपने-अपने कार्यक्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान दिया है उनको रेमन मैग्सेसे पुरस्कार दिया जाता है। रेमन मैग्सेसे पुरस्कार एक तरह से एशियाई देशों के लोगों के लिए नोबेल पुरस्कार की तरह है। रेमन मैग्सेसे पुरस्कार की शुरुआत सर्वप्रथम अप्रैल 1957 में की गई थी। यह पुरस्कार एशिया महाद्वीप का सर्वोच्च नागरिक सम्मान तथा प्रमुख पुरस्कार माना जाता है।

**प्रश्न :** (6) आपने इतनी लंबी यात्रा तय की, तमाम किताबे, शोध पत्र इत्यादि लिखें, विधि भारती पत्रिका का पिछले अठाइस वर्ष से संपादन किया। संसद में लगभग 32 वर्ष कार्य किया। सेवानिवृत्ति के बाद उपभोक्ता फोरम में जज के रूप में पांच वर्ष तक कार्य किया। अभी आपको कुछ ऐसा लगता है कि कुछ और करना बाकी है?

**उत्तर :** मैंने कभी कुछ ऐसा विचार ही नहीं किया। जैसे जो चीज सामने आती गई अपना सर्वश्रेष्ठ देने की कोशिश करी। आज भी यही प्रयास करती हूँ कि क्रियाशील रहूँ। निरंतर कार्य करती रहती हूँ। जैसे जो चीज सामने आती जाए उसमें अपना श्रेष्ठ देने की कोशिश करती हूँ। कोई बहुत अधिक प्लैनिंग्स नहीं बनाती हूँ। बस निरंतर कार्य करना चाहती हूँ और गतिशील रहना चाहती हूँ।

श्रमजीवी लेखिका डा सन्तोष खन्ना मैम का लेखन प्रामाणिक कोटि का माना जाता है। उनके द्वारा लिखी गई कविताएँ मानवीय संवेदना से पूर्ण होती हैं और कहीं ना कहीं मन को छूती हैं। उनके नाटक और उपन्यास स्वयं में विशिष्ट रचनाएँ हैं और 'रोशनी' उपन्यास पर एक केंद्रीय विश्वविद्यालय में शोध कार्य भी हुआ है। उन का व्यक्तित्व और कृतित्व गंभीरता और शालीनता के साथ शिशु समान उत्सुकता का अनोखा सामंजस्य है।। उम्र के अस्सीवें दशक में कमाल की ऊर्जा एवं उत्साह है कि कोई भी युवा असमंजस में पड़ जाए और उसके लिए चुनौती दिखने लगे। कोई भी व्यक्ति विशेष जीवन पर्यंत इतना लंबा कर्मशीलता का मार्ग प्रशस्त करता है तो वह एक संस्थान का रूप ले लेता है और डॉ. सन्तोष खन्ना मैम ऐसी ही एक संस्थान है जो न सिर्फ साहित्यिक योगदान दे रहीं हैं अपितु सभी युवा रचनाकारों के लिए एक सेतु के रूप में कार्य करते हुए आदर्श कायम कर रहीं हैं। उनकी कर्मठता अनुकरणीय है। हमारी शुभकामनाएँ मैम को कि वह इसी तरह रचनात्मक कार्यों के द्वारा हमारे लिए प्रेरणा स्रोत बनी रहें।

❑

रिपोर्ट

डॉ. आशु खन्ना

# विधि भारती परिषद् का भव्य सम्मान समारोह और पुस्तक लोकार्पण

विधि भारती परिषद् ने दिल्ली के हिंदी भवन में एक भव्य सम्मान समारोह में वर्ल्ड बुक ऑफ रिकार्ड, लंदन से सम्मानित काव्य-संग्रह 'काव्य सलिला' तथा विधि भारती परिषद् की स्मारिका और महिला विधि भारती पत्रिका के ताजे अंक-111 (अप्रैल-जून, 2022 का तथा कुछ अन्य पुस्तकों का लोकार्पण हुआ। इस भव्य कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में पधारे थे न्यायमूर्ति श्री शंभू नाथ श्रीवास्तव, इलाहाबाद उच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश और पूर्व प्रमुख लोकायुक्त। अध्यक्षता लोक सभा के पूर्व महासचिव और राष्ट्र के प्रतिष्ठित संविधान विशेषज्ञ डॉ. सुभाष कश्यप की और सानिध्य रहा श्रीमती सत्या बहिन, पूर्व सांसद और अध्यक्ष, संसदीय हिंदी परिषद् का, लब्धप्रतिष्ठित प्राचार्य श्री तिलक राज टक्कर, आर्ट ऑफ लिविंग विश्वविद्यालय के वरिष्ठ संकाय, देश की प्रतिष्ठित और लोकप्रिय कवयित्राी एवं व्यंग्यकार डॉ. कीर्ति काले, पद्मश्री श्याम सिंह शशि, दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डॉ. पूरनचंद टंडन तथा साथ ही वर्ल्ड बुक ऑफ रिकार्ड लंदन की वाइस प्रेसिडेंट श्रीमती सपना सुकुल का।

इस भव्य आयोजन में विधि भारती परिषद् का लब्धप्रतिष्ठित राष्ट्र भारती सम्मान अंतरराष्ट्रीय ख्याति की कवयित्राी डॉ. कीर्ति काले, आर्ट ऑफ लिविंग के वरिष्ठ संकाय, प्राचार्य श्री तिलक राज टक्कर और प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता डॉ. नारायण व्यास को दिया गया। इसी प्रकार, विधि भारती परिषद् का राष्ट्रीय विधि सम्मान भारत के विख्यात संविधान विशेषज्ञ पद्मभूषण डॉ. सुभाष कश्यप तथा लखनऊ के प्रतिष्ठित विधि प्रोफेसर श्री देवदत्त शर्मा को प्रदान किया गया। हिंदी में विधि लेखन के लिए राष्ट्रीय विधि भारती पुस्तक पुरस्कार दिए गए जानी-मानी विधि लेखिका और अधिवक्ता सुधा अवस्थी और नम्रता शुक्ला को।

इसके साथ ही भारत के रेमन मैग्सेसे अवार्डीज पर वर्ल्ड बुक ऑफ रिकॉर्ड यू.के. अंतरराष्ट्रीय काव्य-संग्रह काव्य सलिला के लोकार्पण के साथ-साथ वर्ल्ड बुक ऑफ रिकॉर्ड के 59 प्रतिभागियों को सम्मानित किया गया। इसके लिए उन्हें वर्ल्ड बुक ऑफ रिकॉर्ड, लंदन से प्राप्त प्रमाण-पत्रा, अंतरराष्ट्रीय काव्य-संग्रह काव्य सलिला पुस्तक, स्मृति-चिन्ह के साथ-साथ विधि भारती परिषद् के अंतरराष्ट्रीय वागेश्वरी सृजन सम्मान से भी सम्मानित किया गया। विधि भारती परिषद् की पिछले अठाईस वर्ष से निरंतर प्रकाशित हो रही विधि भारती पत्रिाका के अंक-111 का और एक स्मारिका का भी लोकार्पण हुआ।

सर्वप्रथम, कार्यक्रम का संचालन कर रही डॉक्टर पूनम माटिया ने माननीय अतिथियों को मंच पर आमंत्रिात किया और साथ ही उनसे दीप प्रज्वलित करने का आह्वान किया। डॉ.

सपना सक्सेना दत्ता की भावपूर्ण सरस्वती वंदना से कार्यक्रम का शुभारंभ किया।

मंचासीन अतिथियों के विधिवत् स्वागत के बाद विधि भारती परिषद् की महासचिव और अंतरराष्ट्रीय काव्य-संग्रह काव्य सलिला की संपादक डॉ. सन्तोष खन्ना ने स्वागत भाषण के दौरान इस सम्मान समारोह में दिए जाने वाले सम्मानों के बारे में प्रकाश डालते हुए उन्होंने बताया कि विधि भारती परिषद् की ओर से सम्मानित होने वाले देश की मनीषियों की एक लंबी सूची है। उन्होंने बताया कि विधि भारती परिषद् ने वर्ष 2001 में विधि भारती परिषद् के तत्वावधान में विधि भारती सम्मान आरंभ किए थे। उन दिनों सबसे पहला विधि भारती सम्मान लब्ध प्रतिष्ठित उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्ति हंसराज खन्ना को और दिल्ली विश्वविद्यालय की जानी मानी विधि प्रोफेसर डॉ. लोतिका सरकार को दिया गया था। विधि भारती सम्मान से सम्मानित होने वाले प्रतिष्ठित विद्वानों की एक लंबी सूची है।

**राष्ट्रीय विधि भारती सम्मान**

विधि भारती परिषद् द्वारा वर्ष 2001 में राष्ट्रीय विधि भारती सम्मान प्रारंभ किया गया था। यह सम्मान देश की उन विभूतियों को प्रदान किया जाता है जिन्होंने विधि और न्याय के क्षेत्रा में अद्वितीय रचनात्मक योगदान दिया हो और साथ ही जीवन में सर्वोत्कृष्ट मानव मूल्यों की संस्थापना की हो। इस बार यह सम्मान निम्नवत् हैं --

1. प्रो. देवदत्त शर्मा (2020
2. डॉ. सुभाष कश्यप (2021)

**राष्ट्र भारती सम्मान**

राष्ट्र भारती सम्मान वर्ष 2008 में शुरू किया गया। यह सम्मान देश के उन विद्वानों को दिया जाता है जो अपनी सतत् साधना से देश और समाज को अपने प्रेरक अवदान की गंगा से आप्लावित करते हैं। इस बार यह सम्मान निम्नवत् हैं --

डॉ. कीर्ति काले (2020)

आचार्य श्री तिलक राज टक्कर (2021)

डॉ. नारायण व्यास

**राष्ट्रीय विधि भारती पुस्तक पुरस्कार**

यह पुरस्कार 2005 में प्रारंभ किया गया। यह पुरस्कार हिंदी में विधि लेखन को बढ़ावा देने के लिए दिया जाता है।

श्रीमती सुधा अवस्थी (द्वितीय)

श्रीमती नम्रता शुक्ल। (द्वितीय)

इन सब का सम्मान करने के बाद मंचासीन अतिथियों के कर कमलों द्वारा भारत के रेमन मैग्सेसे अवॉर्डीज पर प्रकाशित अंतरराष्ट्रीय काव्य-संग्रह 'काव्य सलिला' का लोकार्पण किया

गया जो वर्ल्ड बुक ऑफ रिकॉर्ड, लंदन से मान्यता प्राप्त है। इसमें भारत के 59 रेमन मैग्सेसे आवॉर्डीज भारत और विदेश से 59 साहित्यकारों ने सृजन किया है। यह कार्य एक रिकॉर्ड ब्रेकिंग परिघटना है क्योंकि ऐसा कार्य अभी तक विश्व की किसी भाषा में नहीं हुआ है। ऐसा हिंदी में पहली बार हुआ है। हिंदी भवन में विधि भारती परिषद् के कार्यक्रम में सभी प्रतिभागियों का उनके योगदान के लिए सम्मान किया गया, इसके लिए उन्हें काव्य-संग्रह काव्य सलिला पुस्तक, वर्ल्ड बुक ऑफ रिकार्ड, लंदन से प्रमाण-पत्रा तथा विधि भारती परिषद् का अंतरराष्ट्रीय वागेश्वरी सृजन सम्मान और एक स्मृति चिन्ह भेंट किया गया। जिन व्यक्तियों ने भारत के रेमन मैग्सेसे अवॉर्डीज पर अंतरराष्ट्रीय काव्य-संग्रह में भाग लिया। उनकी सूची इस प्रकार है।

**World Book of Records Participants List for Certificate**

1. Dr. Santosh Khanna
2. Dr. Sadhana Gupta
3. Dr. Sanjeev kumar
4. Mrs. Santosh Bansal
5. Ajay Nidan Kannurkar
6. Dr. Alka Sharma
7. Omprakash Chandraker
8. Dr. Shikha Kaushik nutan
9. Prof. Neeta Bora Sharma
10. Dr. Sneh Thakore
11. Dr. Nisha Kevalya Sharma
12. Dr. Alka Sharma
13. Dr. Deepa PK
14. Dr. Shakuntla Kalra
15. Ashwin Goyal
16. Priti Raghav Chauhan
17. Dr. Jai Bhagwan Sharma
18. Dr. Poonam Matia
19. Dr. Kailash Chand Sharma 'Shanki'
20. Ankita Goyal
21. Prof. Mangala Rani
22. Dr. Pushpa Joshi
23. Dr. Ramchander Swami
24. Madhu Rani
25. Arun Kumar Kulshreshtha
26. Pushpa Sinha
27. Mrs. Manorama
28. Saroj Sharma
29. Monika Goyal
30. Poonam kumari
31. Dr. Keerty Goyal
32. Dr. Archana Prakash
33. Dr. Vidushi Bhardwaj
34. Ashish Kumar Shaw
35. Dr. Rajesh Batra
36. Kiran Chawla Kapoor
37. Mahendra Misrs
38. Shri Kishore Singh Chouhan
39. Kamal Kant
40. Dr. Jyotsna
41. Dr. Durgesh Nandini
42. Manju Rani Jain
43. Dr. Seema Kumari Choudhary
44. Dr. Pyarelal Adile
45. Dr. Sapana
46. Priyanka Singh
47. Dr. Abhishek Mishra
48. Dr. Mradula Sharma
49. Dr. Aryavarty Saroj Arya
50. Alka Asthana
51. Suman Lata Sharma
52. Arvind Bharat
53. Soumya Pandey ‘Poorti’
54. Renu Mathur
55. Sapna Saxena Dutta Suhasini
56. Shradhesh Nandini
57. Amita Yripathi
58. Anuragender Kumar Nigam
59. Dr. Usha Dev

❑

पुस्तक समीक्षा

सन्तोष खन्ना

# भारत में न्याय की भाषा

इलाहाबाद उच्च न्यायालय से सेवा-निवृत्त हुए न्यायमूर्ति श्री शंभूनाथ श्रीवास्तव जी, जो छत्तीसगढ़ के प्रमुख लोकायुक्त भी रह चुके हैं, ने न्यायालयों की भाषा को ले कर एक पुस्तक लिखी है जिसका शीर्षक है, 'क्या भारत में न्यायालयों की भाषा हिंदी व प्रादेशिक भाषा होनी चाहिए'। इस पुस्तक के माध्यम से विद्वान न्यायमूर्ति श्री शंभूनाथ श्रीवास्तव की आम जनता के लिए सुलभ बनाने के लिए भाषाओं के महत्त्व को रेखांकित करते हुए कहते हैं कि अधीनस्थ न्यायालयों में त्रिभाषा सूत्र के माध्यम से न्याय संबंधी प्रक्रियाएँ आरंभ की जाएँ। उनका कहना है कि इन न्यायालयों में 'वहाँ की स्थानीय भाषा, हिंदी और अंग्रेजी में न्यायिक कार्यवाही प्रारंभ की जाए और सभी विश्वविद्यालयों आदि में हिंदी और प्रादेशिक भाषाओं की विधि संबंधी शब्दावली का निर्माण कर उसका ज्ञान कराया जाए।

अपनी इस पुस्तक में उन्होंने संविधान और राजभाषा के बारे में संवैधानिक प्रावधानों का उल्लेख करते हुए उच्च न्यायालयों की भाषा पर भी प्रकाश डाला है। देश में उच्च न्यायालयों में प्रयुक्त हो रही प्रादेशिक भाषाओं का उल्लेख करते हुए उन्होंने बताया कि दक्षिण के चारों राज्यों के उच्च न्यायालयों में अंग्रेज़ी के साथ-साथ वहाँ की प्रादेशिक भाषाओं में न्यायिक कार्यवाही की जा रही है। जहाँ तक हिंदी भाषा राज्यों का संबंध है वहाँ मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, राजस्थान आदि के लिए भारत में अनुच्छेद 348 के अंतर्गत अंग्रेज़ी के साथ हिंदी के प्रयोग को प्राधिकृत किया गया है किंतु फिर भी अधिक जोर अंग्रेज़ी के प्रयोग पर रहता है। अनुच्छेद 348 के अंतर्गत चाहे यह प्रावधान शामिल है कि किसी राज्य विशेष का राज्यपाल राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति से उस राज्य विशेष की भाषा को उच्च न्यायालय की कार्यवाही में प्रयोग के लिए प्राधिकृत कर सकता है परंतु देश के सभी राज्यों में राज्यपालों ने इस प्रावधान का छिटपुट ही प्रयोग किया है जिसके कारण समूचे देश में उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय में अंग्रेज़ी का प्रयोग जारी है।

उच्चतम न्यायालय से हाल में सेवा-निवृत्त हुए मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति एन.वी. रमन्ना ने कहा था कि अब समय आ गया है कि न्यायालयों में स्थानीय भाषाओं को लागू किया जाए। मुझे उच्च न्यायालयों में प्रादेशिक भाषाओं को लागू करने संबंधी अभ्यावेदन मिलते रहते हैं इसलिए मुझे लगता है कि जनता की इस माँग को पूरा किया जाए। मैं न्याय प्रदान की पद्धति के भारतीयकरण का प्रबल पक्षधर हूँ।'' यद्यपि भारतीयकरण से उनका अभिप्राय केवल

भारतीय भाषाओं से ही नहीं था बल्कि समूची न्यायिक व्यवस्था को सहज, सरल और सार्थक बनाने से भी था जिसके लिए उन्होंने कहा था कि ''एक राष्ट्रीय न्यायिक प्राधिकरण भी बनाया जाना चाहिए।'' सरकार ने इस तरह के प्राधिकरण के संबंध में पहले एक कानून बनाया था परंतु उसे उच्चतम न्यायालय ने ही असंवैधानिक करार दे दिया था।

जहाँ तक उच्चतम न्यायालय की भाषा का संबंध है, देश को स्वतंत्र हुए 75 वर्ष के बाद भी वह अंग्रेज़ी ही बनी हुई है। जब तक संसद भारत के संविधान के अनुच्छेद 348 को बदल कर कोई नया कानून नहीं बनाती, इस स्थिति में शीघ्र परिवर्तन होने वाला नहीं है। यद्यपि प्रधानमंत्री ने 15 अगस्त, 2022 को लाल किले की प्राचीर से अपने भाषण में कहा था कि भारत को पूर्णतया विकसित देश बनाने के लिए हमें गुलामी की हर सोच और प्रतीक से मुक्ति पानी होगी, परंतु न्याय के लिए अधीनस्थ न्यायालयों, उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय में अभी भी अंग्रेज़ी भाषा का वर्चस्व है, जो गुलामी मानसिकता का ऐसा प्रतीक है जो हमें न तो भारतीयता के समीप जाने देता है और न ही अपना सिर गर्व से उठा कर यह कहने का साहस देता है कि 'गर्व से कहो, हम भारतीय हैं।'

इस पुस्तक में और भी बहुत कुछ है यथा विधि आयोग की रिपोर्ट, माननीय न्यायाधीशों की टिप्पणियाँ और भाषा आयोग की सिफारिशें जिन सब का एक ही निष्कर्ष है कि उच्चतम न्यायालय में अंग्रेज़ी का रहना जरूरी है। ख़ैर, जब तक संसद भारत के संविधान के अनुच्छेद 348 में संशोधन नहीं करती, विधि और न्याय भाषा अनिवार्यतः अंग्रेज़ी बनी रहेगी। अब तक कितनी ही लोक सभाओं के चुनाव हो चुके हैं परंतु मतदाताओं ने न तो यह माँग की कि अब अंग्रेज़ी छोड़ अपनी भारतीय भाषाएँ अपनाओ और अनुच्छेद 348 में समुचित संशोधन कर गुलामी के इस जबरदस्त प्रतीक से मुक्ति पाओ और न ही राजनीतिक दल इसके बारे में क्रियाशील प्रतीत होते हैं। वैसे भी समूचे देश में विधि क्षेत्र में अधिकांश शिक्षा संस्थानों में दाख़िले का रास्ता केवल अंग्रेज़ी ही है जब तक देश की विधि क्षेत्र की शिक्षा अंग्रेज़ी में दी जाती रहेगी, तब तक न्याय जनता को उनकी भाषा में मिलेगा, इसकी कल्पना करना मुश्किल है। इस संबंध में जो भी दबाव बनाना है वह मतदाताओं को बनाना है। मतदाताओं में इस तरह की चेतना कौन लाएगा?

माननीय न्यायमूर्ति श्री शंभूनाथ की यह पुस्तक मतदाताओं में इस चेतना का संचार तो कर ही सकती है कि वे इस बात को समझें कि अगर न्याय जनता को उनकी भाषा के माध्यम से चाहिए तो उन्हें अपने ऐसे प्रतिनिधियों को चुनना होगा जो हिंदी और भारतीय भाषाओं के पक्षधर हों। यद्यपि 2020 में सरकार ने नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में भारतीय भाषाओं को महत्त्व दिया है परंतु प्रश्न यही है कि क्या उस भाषा नीति को ईमानदारी से लागू किया जाएगा या कि यहाँ पर गुलामी की मानसिकता आड़े आएगी?

**समीक्षित पुस्तक :** 'क्या भारत में न्यायालयों की भाषा हिंदी और प्रादेशिक भाषा होनी चाहिए?' लेखक न्यायमूर्ति शंभूनाथ श्रीवास्तव, शांति प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. 138, मूल्य : 450/-- रुपए।

Dr. Shaifali Chouhan

# Public Smoking : A Menace for The Society

**Abstract**

Health is wealth is a great saying. For good health, what we need at the most is clean environment. But the problem of polluted air has become a threat for the health of the people. There are various causes of air pollution but one cause which cannot be ignored at all is smoking. All types of tobacco products contain chemical that can be harmful. Cigarettes, cigars and pipes are used to smoke tobacco. Smoking is harmful not only for person who smoke but also for the people who surround that person. It is so because the smoke is also inhaled by those people. Because of this fact it is called passive smoking. So smoking is a very harmful air pollutant. To protect the health of the people, it is very important to enact laws. This research paper examines the laws related to public smoking and its impact and effectiveness.

**Research Methodology**

The work done is purely doctrinal. For research work books of different eminent authors, relevant laws and landmark judgments of Supreme Court and High Courts have been referred.

**Keywords**

Public smoking, passive smoking, environment, air pollution.

**Introduction**

"Breathe in and breathe out, realize that air is something that we cannot survive without" It has been rightly said by someone but not realized by everyone. Without air we cannot think about our survival. Breathing is a continuous process. It signifies that we are alive. Process of breathing completes with two processes namely: inhaling and exhaling. The intake of oxygen-rich air through the nose is termed as inhalation. The inhaled air then goes to the windpipe and finally into the lungs. When we breathe in the oxygen-rich air, the diaphragm contracts downwards. This step is called inhalation. When we breathe out the air rich in carbon dioxide, the diaphragm relaxes and moves upwards. This step of breathing is called exhalation. There are so many organs which are involved in breathing such as nose, windpipe, lungs,

diaphragm etc. these organs are always continuously involved in breathing and if the air is not clean these organs directly and badly affected by the toxins and poisonous substances present in the air.

There are several pollutants present in the air such as carbon monoxide, lead, nitrogen oxides, ozone, particulate matters, sulfur dioxide etc. In day-to-day life, human beings are involved in so many activities which are causing air pollution like industrial emissions, burning of fossil fuels, transportation, construction etc. Besides these there are some more activities which are very harmful for human health like smoking. Smoking can be done through cigars, cigarettes, bidi, hukka, chillam etc. There are two types of smoking active smoking and passive smoking. When a person smokes, he actively smokes and when a person who is surrounded by people who smoke indirectly comes into exposure of smoking which is called passive smoking.

In the modern day life style people and specially the youngsters are more interested in this kind of activities. It has become a fashion for them.

## SMOKING AND ITS ILL-EFFECTS

Cigarettes, cigars, and pipe tobacco are all prepared from dried tobacco leaves with flavourings and additives to make smoking more enjoyable. The smoke produced by these items is a complex combination of chemicals created by the combustion of tobacco and its additives. In the United States, smoking is responsible for around 20% of all cancers and 30% of all cancer deaths. Tobacco use is responsible for around 80% of lung malignancies and 80% of lung cancer deaths. In both men and women, lung cancer is the leading cause of cancer death. Smoking also raises the risk of malignancies of the mouth, throat and esophagus. It also increases the chances of developing acute myeloid leukaemia. All tobacco products, including cigarettes, cigars, and pipes, can cause cancer. Tobacco smoke comes in no harmless form.

### The Effects of Tobacco Smoking on the Lungs

Smoking harms lungs' airways and little air sacs. This harm begins as soon as a person begins smoking, and it continues to worsen as long as the person continues to smoke. Even so, it could take years for the problem to become obvious enough to be identified as lung disease.

Lung damage from smoking can lead to catastrophic long-term lung disorders including chronic obstructive pulmonary disease (COPD). Smoking can also increase the risk of lung infections like pneumonia and tuberculosis, as well as exacerbate the symptoms of some lung conditions like asthma. COPD refers to both chronic bronchitis and emphysema, and is one of the main causes of death. The majority of patients with COPD have both of these problems, but the severity of each one varies. Damage to the tiny airways in the lungs causes COPD.

**SMOKING-RELATED INFORMATION**

Tobacco use is linked to an increase in adult mortality, particularly in low- and middle-income countries, where the burden of tobacco-related illness and death is greatest. Tobacco use kills nearly 1 million individuals in India each year, accounting for 9.5 percent of all deaths. Tobacco use in India is divided into two categories: smoking and smokeless tobacco. In India, the total prevalence of smoking tobacco use is 10.38 percent, while smokeless tobacco usage is 21.38 percent, according to the Global Adult Tobacco Survey (GATS) performed in 2016–17. Tobacco is currently consumed by 28.6% of all adults, including 42.4 percent of males and 14.2% of women, in the form of smoking or smokeless tobacco. The National Family Health Survey (NFHS), also known as the Demographic Health Survey, is one of India's major health surveys, giving disaggregated estimates of a variety of health and demographic parameters. The Indian government recently revealed the primary findings from Phase 1 of the National Family Health Survey, which contained data on current tobacco use among Indian adults in 22 states and union territories performed in 2019–20. With the exception of Sikkim, Goa, Bihar, Gujarat, Himachal Pradesh, and Mizoram, where there is an increased tendency, tobacco usage among men has decreased in most states. With the exception of Mizoram and Sikkim, the prevalence of women has decreased in practically all states. Tobacco usage in the north-eastern states is still a problem, with a high prevalence rate. Tobacco usage is more prevalent in rural areas than in metropolitan areas. The current statistics show a strong rural–urban split in the incidence of cigarette usage. Due to India's large population, which is at great risk of developing many chronic diseases, the absolute number of tobacco smokers is still relatively high. Tobacco control strategies require more tailored treatments for certain demographic groups. People in India continue to use tobacco in both forms despite all cessation policies.

**Tobacco Use**

- India has about 267 million tobacco users ; Tobacco products are currently used by 28.6 percent of adults (ages 15 and over) (men 42.4 percent; women 14.2 percent). Smokeless tobacco is used by 21.4 percent of adults (men 29.6 percent; women 12.8 percent ).10.7% of adults are smokers (men 19.0 percent ; women 2.0 percent ). Bidis are smoked by the majority of adult smokers (7.7 percent of adults overall)
- Among teenagers (ages 13–15): 8.5 percent of teenagers use tobacco in some manner (boys 9.6%, girls 7.4%); and 4.1 percent of smokers and 4.1 percent of nonsmokers use tobacco.

Exposure to Secondhand Smoke:

Indoor workplaces expose 30.2 percent of adults to secondhand smoke, restaurants expose 7.4 percent, and public transit exposes 13.3 percent. In enclosed public settings, 21% of youth (ages 13–15) are exposed to

secondhand smoke, while 11% are exposed at home. Each year, around 1.2 million Indians die as a result of smoking and secondhand smoke exposure. India is responsible for 70% of the world's smokeless tobacco use. Each year, smokeless tobacco kills around 230,000 Indians. Smokeless tobacco usage is responsible for over 90% of oral malignancies in India. Cigarette and bidi smokers die 6 to 10 years earlier than nonsmokers. Tobacco usage is responsible for 27% of all cancers in India.

**Societal costs**

Tobacco has a tremendous societal cost. The economic cost of tobacco-related disease and death in India was INR 1773.4 billion from 2017 to 2018. Direct health-care expenses accounted for 22% of total costs (INR 387.1 billion), while indirect costs (missed productivity due to illness and death) accounted for 78% (INR 1386.3 billion).Premature death expenses alone accounted for 75% of overall economic expenditures (INR 132.4 billion).Tobacco expenditures total 1.04 percent of India's GDP, with direct medical costs accounting for 5.3 percent of total health spending.

**Tobacco Manufacturing**

ITC Ltd, which is part-owned by British American Tobacco, controls 79 percent of India's cigarette market by volume. Godfrey Phillips India comes in second with 11% of the market, followed by VST Industries with 7.7%. Philip Morris International and Japan Tobacco each had 3.5 percent and 2% of the market. In 2017, India sold about 81.3 billion cigarettes.

**INTERNATIONAL INSTRUMENT TO CONTROL TOBACCO USE**

The 39th WORLD health Assembly (WHO) in its 14th plenary meeting held on 15 may, 1986 urged the member states of WHO which have not yet done so to implement the measures to insure that effective protection is provided to non smokers from involuntary exposure to tobacco smoke and to protect children and young people from being addicted to the use of tobacco. Further the43rd world health assembly in its 14th plenary meeting held on 17th may 1990, reiterated the concerns expressed in the resolution passed in 39th World Health Assembly and urged member states to consider in their tobacco control strategy plans for legislation and effective measures for protecting their citizens with a special attention to risk group such as pregnant women and children from involuntary to tobacco smoke, discourage the use of tobacco and impose progressive restrictions and take concerted action to eventually eliminate all direct and indirect advertising, promotion and sponsorship concerning tobacco.

On February 5, 2004, India accepted the WHO Framework Convention on Tobacco Control. On February 27, 2005, the treaty came into effect.

The World Health Organization's Framework Convention on Tobacco Control (WHO FCTC) is the first treaty written under its auspices. The WHO

FCTC is an evidence-based treaty that supports everyone's right to the best possible health. The WHO FCTC marks a paradigm shift in designing a regulatory strategy to manage addictive chemicals; unlike earlier drug control treaties, the WHO FCTC emphasizes both demand reduction and supply challenges.

The WHO FCTC was created in response to the tobacco epidemic's globalization. A multitude of complicated cross-border factors, including as trade liberalization and direct foreign investment, have aided the spread of the tobacco pandemic. Global marketing, transnational tobacco advertising, promotion, and sponsorship, as well as the international circulation of illicit and counterfeit cigarettes, have all played a role in the rise. Articles 6-14 of the WHO FCTC contain the key demand reduction provisions:

- Price and tax measures to reduce cigarette demand,
- Non-price strategies to reduce tobacco demand,
- Protection against tobacco smoke inhalation;
- Contents of tobacco products are regulated;
- Tobacco product disclosures are regulated;
- Tobacco product packaging and labelling;
- Public awareness, education, communication, and training
- Tobacco promotion, advertising, and sponsorship; and
- Tobacco dependence and cessation measures that reduce demand.

  Articles 15-17 of the WHO FCTC contain the fundamental supply reduction provisions:

- Tobacco-related illegal trade;
- Sales to minors and sales by minors; and,
- Providing financial assistance to commercially viable alternative activities.

The WHO FCTC was open for signing in Geneva from June 16 to 22, 2003, and then from June 30 to June 29, 2004, at the United Nations Headquarters in New York, the Treaty's Depositary. The pact now has 168 signatories, including the European Community, making it one of the most universally embraced accords in UN history. Members who sign the Convention signal that they will work hard to ratify, adopt, or approve it in good faith, and that they will make a political commitment not to undermine the Convention's goals. Countries that wish to join the Convention but did not sign it by June 29, 2004, can do so by accession, which is a one-step process equivalent to ratification.

## LAWS RELATED TO SMOKING IN INDIA

The Cigarettes (Regulation of Production, Supply, and Distribution) Act, 1975, was India's first tobacco-related legislation, requiring specific statutory health warnings on cigarette packs in 1975. On May 18, 2003, the President signed the Cigarettes and Other Tobacco Products (Prohibition of Advertisement and Regulation of Trade and Commerce, Production, Supply, and Distribution) Act, abbreviated to COTPA. It went into effect on May 1, 2004. The Act applies to cigarettes, cigars, bidis, gutka, pan masala (including

tobacco), Mavva, Khaini, snuff, and all other tobacco-containing products in any form throughout India. It defines smoking under section 3(n) as smoking of tobacco in any form whether in the form of cigarettes, cigar, bidis or otherwise with the aid of a pipe, wrapper or any other instrument. And it defines public place under section 3(l) as any place to which the public have access, whether as of right or not, and includes auditorium, hospital building, railway waiting room, amusement centers, restraints, public offices, court buildings, educational institution, libraries, public conveyances and the like which are visiting by general public but does not include any open space.

The selling of tobacco products is prohibited within 100 yards of any educational institution, beginning on December 1, 2004.

Smoking prohibition in public places around the country:

The Prohibition of Smoking in Public Places Rules, 2008, and COTPA made smoking in public places illegal nationwide on October 2, 2008. Only public venues are exempt from the nationwide smoke-free law. Auditoriums, cinemas, hospitals, public transportation (aircraft, buses, trains, metros, monorails, taxis) and related facilities (airports, bus stands/stations, railway stations), restaurants, hotels, bars, pubs, amusement centers, offices (government and private), libraries, courts, post offices, markets, shopping malls, canteens, refreshment rooms, banquet halls, discothèques, coffee houses, educational institutions, and parks) are all places where smoking is prohibited. Inside one's home or vehicle, smoking is permitted. Airports, restaurants, bars, pubs, discothèques, and several other enclosed businesses allow smoking if dedicated smoking spaces are provided. Anyone who breaks this law shall be fined upto 200 INR. Tobacco products may not be sold within 100 yards of school institutions.

**Warnings in pictures**

After numerous rounds of revisions and delays, rules requiring visual warnings on tobacco products were notified on May 3, 2009, and went into effect on May 31, 2009. Display of pictorial health warning on all tobacco product packs has been made mandatory. According to Section 7 of COTPA it is illegal to manufacture, sell, or import cigarettes or any other tobacco product unless each package of cigarettes or any other tobacco product has pictorial warnings on the label that cover at least 40% of the package. Once a year, the warnings are updated. In order to ensure that the prescribed warning is visible and prominent, the law also barred the use of more than two languages on the pack.

**Advertising**

The Cable Television Network (Regulation) Amendment Bill, which has been in effect since September 8, 2000, restricts any commercials for cigarettes and alcohol. The government began running two anti-tobacco adverts, titled "Sponge" and "Mukesh," in movie theatres and on television on October 2, 2012. When smoking sequences are featured in a film, a disclaimer must be

displayed on screen.  From October 2, 2013, the “Sponge” and “Mukesh” advertising were replaced by new spots dubbed “Child” and “Dhuan.”

**In the movie**

Characters in movies have a long history of smoking. According to a WHO research, tobacco is depicted in 76% of movies, with cigarettes accounting for 72% of all depictions.  Despite the fact that chewing tobacco and bidis make up the majority of tobacco usage in India, cigarettes account for 20% of the market.  Smoking was largely portrayed as a vice of villains in movies before to the 1990s. A smoking ban, proposed by the Ministry of Health and Family Welfare in May 2005, went into force on October 2, 2005, prohibiting actors and actresses from smoking in films and television shows. With approximately 15 million people watch movies every day, then-Health Minister Anubumani Ramadoss argued that the ban will “prevent the lives of millions of people who could become hooked to smoking under the influence of movies.”  Smoking scenes in any movie were outlawed under the smoking prohibition, even any old or historical films where, according to some, smoking was required to make the depiction accurate. If a character is shown smoking, the scene must be accompanied by a notice stating that smoking is harmful to one’s health, as well as disclaimers at the opening and end of the film. Anti-smoking commercials must be shown at the start of the film and at the intermission. Additionally, during any scene where smoking is present, a disclaimer must be displayed on-screen.

**The law on hookah**

Hookah drinking at hookah bars was not prohibited by the nationwide smoking ban. However, hookah usage in hookah bars has been outlawed in numerous Indian cities .Indore is one of those cities where hookah bars are banned. The owners and operators of hookah bars are frequently the targets of police raids, rather than the consumers. Customers are typically punished, while business owners may face steep fines and/or prison time. Hookahs can still be purchased at stores and consumed at home.

**E-cigarette legislation**

In India, e-cigarettes are prohibited from being imported, sold, or used. In 2014, Punjab became the first state in India to outlaw vaping. Following incidences of mass E-cigarette confiscation from numerous teenagers in Delhi and NCR schools, the Indian government outlawed the sale and import of e-cigarettes.

**Landmark judgments related to the issue**

Indian judiciary has always played a very significant role in protecting fundamental rights of people. In the case of Kharak Singh v State of U.P. the

Apex Court emphasized that by the term “life” something more is meant than mere animal existence. In so many landmark judgments the court has defined what is meant by dignified life such as Maneka Gandhi v Union of India, Bandhua Mukti Morcha v Union of India etc. There a lot of judgments in which the Supreme Court has shown concern towards the jurisprudence of environmental matters. The Apex Court has also held that in cases where a person’s right to the enjoyment of pollution free air and water is hampered, he can file public interest litigation for the same. This landmark judgment was given in case of Subhash Kumar v state of Bihar.

Smoking habit of the people is also contributing to air pollution. It results in respiratory morbidity of children. Passive smoking further aggravates the air pollution highlighting the gravity of environmental tobacco smoke, the High Court of Kerala in K. Ramkrishnan v. State of Kerala (AIR 1999 KER 385(397)) observed, “exposing unsuspecting individual to environmental tobacco smoke with ominous consequences amount to taking away his life not by execution of death sentence but by slow and gradual process by robbing him of all his qualities and graces, a process is much more cruel than sending man to gallows. Smokers do not dig their own graves prematurely but also pose a serious threat to the lives of lakhs of innocent non- smokers”. The court therefore directed all the collectors of the district to prohibit smoking in public places.

Expressing concern for the injurious effect of smoking on smokers and passive smokers, the Supreme Court in the case of Murli S. Deora v. Union of India (AIR 2002 SC 40 (42)), directed the union of India, state governments and union territories to take effective steps to ensure that smoking is strictly prohibited in public places such as libraries, hospitals, auditoriums, educational institutions, courts, public offices, railway stations, bus stands, airport etc.

## CONCLUSION AND SUGGESTIONS

It is generally said that we human beings get attracted to the bad habits easily as compared to the good habits. Smoking is one of those activities which causes only damage to a person. It is harmful for his health and wealth both.

Smoking has a wide range of side effects, some of which can be fatal. The problems that consuming tobacco might cause should deter anyone from doing so, but it still happens. Youth still have a significant likelihood of experimenting with tobacco use, and living in an environment where secondhand smoke is prevalent makes it much worse. As previously noted, an apartment building would be an excellent example of the dangers of second- and third-hand smoke. When one individual smokes, the entire structure smokes. This term plainly explains that when one individual succumbs to the addiction known as smoking, the entire building and its environs are affected.

According to a review of studies conducted by public health specialists gathered by WHO on April 29, 2020, smokers are more likely than non-smokers to acquire severe disease from COVID 19. Covid 19 is a bacterial infection that

usually affects the lungs. Smoking impairs lung function, making it more difficult for the body to fight infections like the Corona virus.

Our legislature has taken notice of the problem and created laws and regulations to regulate tobacco smoking, limiting involuntary smoking by non-smokers. However, young people continue to be drawn to this practise. Only self-awareness of the harmful effects of smoking, as well as a pledge to stop smoking for himself, his family, and his surroundings, can motivate a person to quit. We have read about the harmful effects of smoking since we were children in our school books, and now, as we described above, there is a health warning printed on the pack of tobacco products itself, so there is no shortage of awareness at any level. Everyone knows the consequences of smoking, whether they are young or elderly, villagers or city dwellers. Even an illiterate person might imagine the dangers after seeing the visual warning on the package. So it is solely in the hands of a smoker to give up the habit, and everybody who is surrounded by smokers should strive to stay a safe distance from them. If a person has difficulty doing so, he can try yoga, contact a doctor, or one of the many other methods available to assist him break the habit. Finally, the best thing a smoker can do for himself, his family, and society as a whole is to STOP SMOKING.

"A CIGARETTE IS THE ONLY CONSUMER PRODUCT WHICH WHEN USED AS DIRECTED KILLS ITS CONSUMER"- GRO BRUNDTLAND

❑

**BIBLIOGRAPHY**


1. DR. MYNENI, S.R., 2019, *ENVIRONMENTAL LAW* , 2ND EDITION, ASIA LAW HOUSE
2. PANDEY, J.N., 2020, *CONSTITUTIONAL LAW OF INDIA*, 57TH EDITION, CLA
3. DR. PARANJAPE, V.N., 2019, *ENVIRONMENTAL LAW*,2ND EDITION REPRINT, CLA
4. GLOBAL ADULT TOBACCO SURVEY-INDIA 2016-17
5. NATIONAL FAMILY HEALTH SURVEY 2019-20
6. WHO TOBACCO. PUBLISHED MAY 27, 2020
7. WHO FACTSHEET 2018,INDIA
8. SHUKLA, V.N.,2017, CONSTITUTION OF INDIA, 13TH EDITION, EBC

Meenu Kumari

# Election Manifestos and Freebies : Observation & Directions of Supreme Court

Oxford dictionary defines "manifestos as a public declaration of the policy and aims of a group such as political party.Therefore, an election manifesto is a published document containing declaration of a ideology, intentions, views, policies and programs of political party."

Every manifesto should have a simple principle or set of principles to espouse. The body of a manifesto usually breaks the party's policies down into a number of key areas. Manifestos are designed to try to make the reader to vote for a particular party, they tend to replicate certain key ideas and phases which they want the voters to linked with their campaign.

For a diverse country like India, a manifesto serves as a common denominator for a party's policies. It is also very important for voters for they can hold parties accountable for promises made before the elections.

It is not mandatory for a party to release a manifesto. However, in a healthy democracy, an election manifesto serves as an indicator of a commitment made by a party to voters. It also help voters to make informed choices about whom to vote for and who not to.

The manifestos for the general elections are being published by the National as well as State parties which alongwith their ideologies include major policies, programmes and other agendas of the Government.

The manifesto serves the following purposes:

- It helps the voters to choose in between the policies and programmes of the parties contesting the elections and resultantly, cast their vote in support of the selected party.
- It also shows the achievements and failures of both the ruling party and the opposition party during its last tenure, thereby, mobilizing the opinion of public against them.
- Accordingly, the people can exert pressure on the ruling party in Parliament to fulfill the promises made in their election manifestos.

**Observation & Directions of Supreme Court of India**

A Public Interest Litigation has been filed in the Supreme Court by the Advocate, Ashwini Kumar Upadhyay, to direct the Centre as well the Election

Commission of India to regulate and control poll manifestos and to seize the poll symbol. The party failing to fulfill their promises shall be deregistered.

Therefore, the Supreme Court in S. Subramaniam Balaji Vs. Govt. of TN & Others[1] directed the Election Commission of India to frame guidelines in which election manifestos should be included in the model code of conduct.

**Directions**

**Para (77) of the Supreme Court Judgment :** (77) Although, the law is obvious that the promises in the election manifesto cannot be construed as 'corrupt practice' under Section 123 of RP Act, the reality cannot be ruled out that distribution of freebies of any kind, undoubtedly, influences all people. It shakes the root of free and fair elections to a large degree. The Election Commission through its counsel also conveyed the same feeling both in the affidavit and in the argument that the promise of such freebies at government cost disturbs the level playing field and vitiates the electoral process and thereby expressed willingness to implement any directions or decision of this Court in this regard.

**Para (78) :** (78) As observed in the earlier part of the judgment, this Court has limited power to issue directions to the Legislature to legislate on a particular issue. However, the Election Commission, in order, to ensure level playing field between the contesting parties and candidates in elections and also in order to see that the purity of the election process does not get vitiated, as in past been issuing instructions under the Model Code of Conduct. The fountainhead of the powers under which the commission issues these orders is Article 324 of the Constitution, which mandates the Election Commission to hold free and fair elections. It is equally imperative to acknowledge that the Election Commission cannot issue such orders if the subject matter of the order of Commission is covered by a legislative measure.

**Para (79) :** (79) Therefore, considering that there is no enactment that directly governs the contents of the election manifesto, we hereby direct the Election Commission to frame guidelines for the same in consultation with all the recognized political parties as when it had acted while framing guidelines for general conduct of the candidates, meetings, processions, polling day, party in power etc. In the similar way, a separate head for guidelines for election manifesto released by a political party can also be included in the Model Code of Conduct for the Guidance of Political Parties & Candidates. We are mindful of the fact that generally, political parties release their election manifesto before the announcement of election date, in that scenario, strictly speaking, the Election Commission will not have the authority to regulate any act which is done before the announcement of the date. Nevertheless, an exception can be made in this regard as the purpose of election manifesto is directly associated with the election process.

**Para (80) :** (80) We hereby direct the Election Commission to take up this task as early as possible owing to its utmost importance. We also record the

need for a separate legislation to be passed by the Legislature in this regard for governing the political parties in our democratic society."

**suggestions**

The Supreme Court in its above judgement has asked the Election Commission to frame guidelines in consonance with the recognized parties regarding their election manifestos based on the following principles :

- "Although the law is obvious that the promises in the election manifesto cannot be construed as 'corrupt practice' under Section 123 of RP Act, the reality cannot be ruled out that distribution of freebies of any kind, undoubtedly, influences all people. It shakes the root of free and fair elections to a large degree".
- "The Election Commission in order to ensure level playing field between the contesting parties and the candidates in an election and also in order to see that the purity of the election process does not get vitiated, as in past been issuing instructions under the Model Code of Conduct. Power of Election Commission for issuing such orders are vested under Article 324 of the Constitution".
- "We are mindful of the fact that generally political parties release their election manifesto before the announcement of election date, in that scenario, strictly speaking, the Election Commission will not have the authority to regulate any act which is done before the announcement of the date. Nevertheless, an exception can be made in this regard as the purpose of election manifesto is directly associated with the election process."

In a meeting of the representatives of National and State recognized parties at Nirvachan Sadan, New Delhi, held by the Election Commission of India, many suggestions as to the guidelines were suggested and supported. At the same time, it was iterated that the political parties are duty bound to fulfill their promises made in the manifestos. Some of the guidelines can be concluded as follows :

- Broad framework of guidelines on Election Manifesto and Freebies needs to be framed.
- A mechanism for ensuring compliance of guidelines is to be issued.
- The freebies promised by the parties shall have their impact on social and economic development of the country.
- The Model Code of Conduct should be followed strictly and should be announced even before the announcement of date of election.

**Conclusion**

Our Constitution is silent regarding political parties and Election

manifestos. There is no provision related to it and no guidelines provided to Election Commission. All powers related to the manifesto vested in the hands of Election Commission.Parliament should make a law regarding election manifeston. Provision should be made in the Constitution related to this. There is a strict requirementof a shift in way of thinking of political parties that they are restricted by the law to make their manifesto.

Powers related to recognition of national party and state party, power related to assigning symbols to political parties are vested in the hands of Election Commission, under the Constitution of India. In addition to this, there should also be a provision to make a law related to the manifestos. After the law is passed by the Parliament, the Election Commission should come up with new directions and guidelines. Only then, the objectives of the democracy achieved by the democratic country.

❑

**Footnote**

1. SLP (C) No. 21455 of 2008

## Corruption by a public servant is an offence : Supreme Court

The Supreme Court bench made the observation while setting aside an order of the Madras high court which quashed a criminal complaint in a cash-for-job scam on the basis of settlement between the parties.

Corruption by a public servant is an offence against the State and the society and courts cannot deal with such cases like "suits for specific performance", the Supreme Court. said. A bench of Justices S.A. Nazeer and V Ramasubramanian made the observation while setting aside an order of the Madras high court which quashed a criminal complaint in a cash-for-job scam on the basis of settlement between the parties.

"It is needless to point out that corruption by a public servant is an offence against the State and the society at large. The Court cannot deal with cases involving abuse of official position and adoption of corrupt practices, like suits for specific performance, where the refund of the money paid may also satisfy the agreement holder.

"Therefore we hold that the High Court was completely in error in quashing the criminal complaint," the bench said.

❑

Akanksha Verma and Dr. Raj Kumar Yadav

# Reproductive Rights of Women: An Analysis of Pro Choice

## INTRODUCTION

Nearly all religions in the world acknowledge the need and value of a child. One of the most joyful experiences in a person's life is the birth of a child. Having children is regarded as a sacred obligation that every person has to their families and societies, and this obligation is typically fulfilled through the institution of marriage. The act of reproduction is usually a natural process of sexual union between couples, requiring no external interference from a third party. Hence, reproductive rights are declared fundamental human rights both in international and regional frameworks of human rights. Although it is widely acknowledged that everyone has the right to assert their reproductive autonomy, doing so in particular circumstances may give rise to significant legal and human rights issues.

The process of women's empowerment has received more attention over the last few decades. The international community has taken several steps to ensure women's empowerment. Most of these initiatives focus on giving women greater political and economic clout. The issues surrounding preserving and safeguarding citizens' reproductive rights have recently taken on particular significance for India. Women's empowerment encompasses not only mainstreaming them or giving them the tools to participate in political and economic processes but also the ability to control every aspect of their lives. Reproductive rights, or the process of women's reproductive empowerment, is one of these crucial aspects of women's lives that demands immediate attention. True female reproductive empowerment is possible only when reproductive rights are sufficiently understood and accessible. One of the women's most significant rights is the right to an unobstructed reproductive system. It is a right that allows women to access reproductive choices without fear of coercion, discrimination, or violence. The reproductive right of a woman has been recognized by the Indian courts as a non-negotiable right implicitly protected by the fundamental right to life in several cases that have arisen in recent years. Individuals with reproductive rights can choose whether or not to

have children and maintain their reproductive health. Therefore, it is important to comprehend the breadth and depth of women's reproductive rights.

## REPRODUCTIVE RIGHTS

One of the most substantial components of human rights is the right to reproduce. They are surrounded by legal protections that grant people a range of civil, social, political, and economic freedoms. This includes the rights to health and life, equality, privacy, freedom from torture and other cruel treatment, and non-discrimination, among other things. The state-guaranteed reproductive rights of a woman include the right to access comprehensive reproductive health information and services, the right to positive reproductive health outcomes and the ability to make fully informed decisions. Reproductive rights, closely related to the inalienable right to life, respect for one's dignity, personal integrity, etc., are assumed to be the newest non-property personal rights.

The right to marry and start a family "without limitation due to race, nationality, or religion" is emphasized in the Universal Declaration of Human Rights, adopted by the United Nations in 1948. According to Article 16, the family has a right to protection from the state because it is society's basic and natural unit. Mothers and children also have a right to special care and assistance, according to Article 25. International Conference on Population and Development, 1994 also declares that this right also includes the right to sexual and reproductive health care services, as well as the right of access to reproductive services. Different aspects of reproductive rights have been recognized as human rights at the international and regional levels by the various human rights instruments. Most importantly, the right to reproductive health and education is expressly granted by Article 23 (1) (b) of the International Convention on the Protection and Promotion of the Rights and Dignity of Persons with Disabilities, 2006. Women's reproductive rights are recognized as human rights at the regional level by Article 14 of the Protocol to the African Charter on Human and Peoples Rights on the Rights of Women in Africa, 2003. The Teheran International Human Rights Conference,1948, is where the idea of reproductive rights as human rights first emerged. According to this document, every parent's fundamental human right is to determine how many children they want to have and how far apart they should be from one another. Additionally, international conferences like the Women's Conference, 1975; Vienna Human Rights Conference, 1993; International Conference on Population and Development,1994 and Beijing World Conference of Women,1995, define reproductive rights as human rights. The UN Millennium Development Goals, adopted in 2000, also highlighted the importance of the right to procreation and urged governments to pay attention to the matter because it is a crucial part of development. Thus, it can be seen that reproductive rights are recognized as basic human rights both in international and national human rights frameworks.

The right to have children includes:

- Adoption;
- Assisted reproduction; and
- Parental care and Maternity leave.

Right not to have children includes:

- Abortion;
- Contraception; and
- Sterilization.

As illustrated above, the scope of reproductive rights may be extensive. Generally speaking, reproductive rights can include the following:

(1) the right to abstain from having children;

(2) the right to have children; and

(3) the right to have children of a specific kind and number.

Each of these major categories has a variety of manifestations and variations that call for explanation and, to some extent, boundary-setting as reproductive rights includes both positive and negative rights.

**REPRODUCTIVE RIGHTS IN INDIA**

In India, various laws and policies covering health, employment, education, protection from gender-based violence, etc., apply to an individual's or a couple's reproductive rights. Part III of the Indian Constitution protects certain rights, including reproductive rights for women, which are linked to our fundamental rights as individuals. Article 13 of the Constitution prevents the State from making any such law which is against our fundamental rights or takes us away from our fundamental rights. The right to equality before the law and equal protection under the law within Indian territory are discussed in Article 14. Men and women now have equal rights to make autonomous decisions, and nothing can be forced upon them by anyone, including their right to choose their reproductive options. Another is Article 15, which forbids discrimination based on race, caste, religion, sex, place of birth, or any combination of these. In light of the fact that it shields women from all forms of discrimination, this provision is also very closely related to the protection of a woman's reproductive rights. She can make an independent decision without any fear of gender bias. No person shall be deprived of his or her personal life or liberty, according to Article 21. Every person has the freedom to choose and decide for themselves, and no one else has the authority to deny anyone the enjoyment of these rights. Like men, women have the freedom to exercise their judgement and enjoy the rights granted to them by the provision of reproductive rights. Certain constitutional provisions also require the Indian government to provide legal redress when fundamental rights are violated. To guarantee that no citizen was denied access to justice because of their financial situation, Article 39(a) of the Indian Constitution also required the State to provide equal access to justice and free legal aid.

Although The Constitution of India does not explicitly declare that reproductive rights are fundamental rights. India is a party to most international human rights documents: UDHR, 1948; ICCPR, 1966; ICESCR, 1966; CDEDAW, 1979; and the Convention on Rights of Persons with Disabilities,2006. All of these documents explicitly grant a variety of reproductive rights, including the right to privacy, the right to marriage equality and consent, the right to family planning education and information, the right to start a family, the right to use family planning services, the right to choose how many children to have and how far apart they should be, the right to benefit from scientific advancement, etc. In the case Vishaka v. State of Rajasthan, in which the Supreme Court ruled that, in the absence of law regarding a specific matter in India, the international law can be referred to fill the legislative gap when there is an absence of legislation. Additionally, the Supreme Court of India recently ruled in the case of Justice K.S. Puttaswamy (Retd) v. Union of India that "Privacy is based on the preservation of personal intimacies, the sanctity of family life, marriage, procreation, the home, and sexual orientation." The right to privacy includes the ability to be left alone. Individual autonomy is protected by privacy, which acknowledges the person's capacity to manage key aspects of his or her life. An analysis of the cases demonstrates that as an element of both the right to personal liberty and the right to privacy, reproductive rights in India have attained the status of fundamental rights.

## REPRODUCTIVE RIGHTS : LEGAL ISSUES

The various facets of reproductive rights are fairly recognized in accordance with international, regional, and national human rights frameworks. Let's now discuss the legal issues related to reproductive rights.

### Right to abortion

The removal of a foetus from a pregnant woman's uterus is known as an abortion or pregnancy termination. Reproductive rights include the right to legal and safe abortion.

However, Section 312 of the Indian Penal Code, 1860, makes abortion a criminal offence in India. In this section, abortion is defined as a miscarriage, and both pregnant women and those who participate in such a process are subject to penalties.

Medical Termination of Pregnancy (Amendment) Bill, 2021 permits:

1. Abortion is to be allowed for up to 20 weeks in the opinion of just one medical practitioner.
2. To terminate pregnancies between 20 and 24 weeks, the opinion of two doctors is required. This extension of the gestation period up to 24 weeks is given for special categories of women such as rape/incest victims, differently-abled women and minors.

3. For abortions beyond 24 weeks, a state-level Medical Board will decide if it can be permitted in case of substantial foetal abnormalities. 1. The Board will consist of a gynaecologist, a paediatrician, a radiologist or sonographer and any other number of members as notified by the state government.
4. Only doctors with specialization in gynaecology/obstetrics can perform abortions.
5. According to the Bill, the "name and other particulars of a woman whose pregnancy has been terminated shall not be revealed" except to a person authorized by law.
6. In cases where abortions are desired to terminate pregnancies arising out of rape, where the gestation period exceeds 24 weeks, the only manner would be through a writ petition.

It is clear that only a limited right to abortion is protected in India, despite the fact that such a right is established as a component of reproductive rights. Since the right to an abortion is not unalienable, reasonable restrictions can be imposed through a procedure established by law.

## ACCESS TO ASSISTED REPRODUCTIVE TECHNOLOGIES

Many couples are unable to become parents through the natural process of procreation. Infertility is the medical term for this situation. When a couple is unable to carry a pregnancy to term or conceive naturally even after a year of unprotected sexual intercourse, this condition is known as infertility. Adoption has traditionally been an option for infertile couples. The development of specific medical technologies that allow an infertile couple to have a biological child has been made possible by advances in technology and medical science. Artificial reproductive technologies are the name given to a group of medical advancements that allow couples who would not otherwise be able to have children to become parents (ARTs). Although there are many ARTs, artificial insemination, in vitro fertilization, and surrogacy are the most well-known and frequently used techniques.

In general, ART procedures involve surgically removing eggs from a woman's ovaries, combining them with sperm in the laboratory, and returning them to the woman's body or another woman. There is a significant effort to regulate this highly complex area by the Indian Council of Medical Research by providing non-binding guidelines from time to time. The first effort appeared in the form of Ethical Guidelines for Biomedical Research for Human Subjects, 2000. Subsequently, ICMR and the National Academy of Medical Sciences (NAMS) framed the National Guidelines for Accreditation, Supervision, and Regulation of the Assisted Reproductive Technology Clinic, 200511 and the Assisted Reproductive Technology Bill and Rules 2008, which were reframed in 2010. Recently, the Assisted Reproductive Technology (Regulation) Bill, 2021, was passed by Rajya Sabha on 8 December 2021. The bill seeks to provide for

the regulation of all assisted technology services in India.

**SAME-SEX COUPLES**

Due to the increase in same-sex relationships over the past few decades, these relationships are now officially recognized in a number of nations. Same-sex marriage is now common practice as a result of this. It should be noted that these couples share the natural desire of heterosexual couples to have children of their own. It should be noted that same-sex couples are unable to exercise their reproductive rights in the same manner as other people and must instead use one or more ARTs in order to do so. There has always been controversy surrounding gay and lesbian couples' use of ART. It is argued that because same-sex couples are also human beings, they should have the same rights as heterosexual couples in general. On the grounds that the child did not have a father figure or mother figure, same-sex couples' claims were criticized. While it is possible for a father, mother, or both to pass away after the birth of a child, this is never the case for same-sex couples. It is suggested that same-sex couples should be allowed to use their reproductive rights. However, the State can impose reasonable restrictions for the protection and promotion of the welfare of children and societal interests.

**RIGHTS OF TRANSGENDER PERSONS**

The claim of reproductive rights by transgender people in this context is a related issue. A group of people known as transgenders exhibit traits and physical characteristics shared by both men and women but are unable to identify as either men or women. The Supreme Court ruled that transgender people have the same fundamental rights as everyone else in the case of the National Legal Services Authority v. Union of India (AIR 2014 SC 1863). As a corollary, transgender people should also have access to the reproductive freedoms that are included in the right to personal liberty and the right to privacy under Article 21. The Transgender Persons (Protection of Rights) Act, 2019, was passed by the Indian Parliament in 2019 with the aim of protecting transgender people's rights, welfare, and other related issues. However, this Act makes no mention of transgender people's reproductive rights.

**SINGLE PARENT**

Individual rights based on the right to life and personal freedom include the right to procreate. In this regard, the issue of whether or not a single person, a male or female, can assert reproductive rights and, if so, to what degree arises. The topic of single-person reproduction is not addressed by Indian law. One conclusion that can be drawn from this is that only those who are of marriageable age are eligible to claim reproductive rights because reproductive rights are linked to the right to marriage and the right to create a family.

These kinds of limitations are necessary when you consider how pregnancy and childbirth can affect an adolescent's life. According to various literary works, "adolescent pregnancy and childbirth have a severe impact on the negative emotional, social, and other aspects of the adolescent as well as the resulting child." Therefore, regardless of whether a person is a single male or female, if they reach marriageable age, they should be granted the fundamentals of reproductive rights.

## CONCLUSION

Every person is endowed by nature with the lovely ability to procreate life, and every woman treasures the experience of motherhood. Because of this, every couple has an innate desire to have children, and reproductive rights recognize this. The framework emphasizes that the right to reproduction is a group of closely related rights, not a single human right. The most significant rights that fall under the category of reproductive rights include the right to privacy; the right to equality; the right against discrimination; the right to marriage; the right to start a family; the right against sexual violence; the right to make your own decisions without being pressured; the right to choose your own number and spacing; the right to maternity; and the right to benefit from scientific advancements, among other things. Due to these provisions, couples are free to make their own choices regarding their sexual relations without fearing pregnancy and contracting diseases. This right gives them a choice to choose the number of children they want to have and what will be the time gap between them. The only way to tackle the reproductive issues in family and community labels is by placing them within the boundary spectrum of needs and rights of the women as perceived.The right to personal liberty and the right to privacy have both been interpreted by the national judiciary to include all aspects of reproductive rights. Thus, it can be seen that our nation has a solid legal foundation for reproductive rights. To strike a balance between an individual's right to choose whether or not to have children and the interests of society as a whole, as well as the interests of children, it is necessary to address the various legal conundrums.

❑

## References


1. Assisted Reproductive Technology (ART) Market -Growth, Trends, COVID-19 Impact, and Forecasts (2021 - 2026), available at: https://www.mordorintelligence.com/industryreports/assisted-reproductive-technology-art-market (last visited on September 22, 2022).
2. Assisted reproductive technology, available at: https://www.cdc.gov/art/index.html (last visited on September 22, 2022).
3. Cui W, "Mother or nothing: the agony of infertility" 88/12 Bulletin of the

World Health Organization 881-882 (2010).

4. Harris, J. (2000). Rights and reproductive choice. Harris J., Holm S. (eds.) The Future of Human Reproduction. Oxford: Clarendon Press, pp. 34–36.
5. K.D. Gaur, "Abortion and the Law in the countries of Indian Subcontinent, ASEAN Region, United Kingdom, Ireland and United States of America", Journal of Indian Law Institute, (1995).
6. Millennium Development Goals (MDGs)-WHO available at https://www.who.int (last visited on September, 23, 2022).
7. National Guidelines for Accreditation, Supervision and Regulation of ART Clinics in India, Indian Council of Medical Research National Academy of Medical Sciences 4 (India), (2005, New Delhi).
8. Protocol to the African Charter on Human and Peoples' Rights on the Rights of Women in Africa, O.A.U. Doc. 5 CAB/LEG/66.6 (2003), art. 14(2) (c).
9. Robert H. Blank, "Assisted Reproduction and Reproductive Rights: The Case of in Vitro Fertilization" 16 Politics and the Life Sciences 279-288 (1997).
10. Report of the International Conference on Population and Development, Cairo, 5–13 September 1994 (United Nations publication, Sales No. E.95.XIII.18), chap. I, resolution 1, annex.
11. Report of the Fourth World Conference on Women, Beijing, 4–15 September 1995 (United Nations publication, Sales No. E.96.IV.13), chap. I, resolution 1, annexes I and II.
12. The Preamble, The Assisted Reproductive Technology (Regulation) Bill, 2010.
13. The Assisted Reproductive Technology (Regulation) Bill, 2020, available at: https://prsindia.org/billtrack/the-assisted-reproductive-technology-regulation-bill-2020 (last visited on September 23, 2021.
14. World Health Organization. Safe abortion: Technical and policy guidance for health systems. Geneva: WHO; 2012

**फोन :** 011-27491549
**मोबाइल :** 09899651272
09899651872

## सदस्यता फॉर्म

### विधि भारती परिषद्
बीएच-48 (पूर्वी) शालीमार बाग, दिल्ली-110088

महिला विधि भारती पत्रिका यू.जी.सी. की सूची में पहले शामिल थी।
क्रमांक 156, पत्रिका संख्या 48462

कृपया मुझे विधि भारती परिषद् का सदस्य बनाने की कृपा करें। मेरा चैक/बैंक ड्रॉफ़्ट संलग्न है --

1. वार्षिक सदस्य शुल्क — 500/-- रुपए
2. आजीवन सदस्य शुल्क — 5,000/-- रुपए
3. संस्थागत वार्षिक सदस्य शुल्क — 500/-- रुपए
4. संस्थागत आजीवन सदस्य शुल्क — 20,000/-- रुपए

नाम : ..........

शैक्षिक योग्यता : ..........

व्यवसाय : ..........

कोई प्रकाशित कृतियाँ : ..........

स्थाई पता : ..........

**फोन (कार्यालय) :** .......... **(घर) :** ..........

**मोबाइल :** .......... **ई-मेल :** ..........

**नोट :** विधि भारती परिषद् की सदस्यता के लिए शुल्क परिषद् के बैंक खाते में जमा कराया जा सकता है। कृपया शुल्क के साथ बैंक सेवा चार्ज 100/-- रुपए जमा कराएँ।

**Vidhi Bharati Parishad** : SBI SB Account No. 10115361055
IFSC Code : SBIN0003702

## Our New Life Members

247. **Ms. Rinku Gangwani**
Lecture, School of Law,
Mohan Lal Sukhadia University
Udaipur, Rajesthan
248. **Smt. Samta Dube Tiwari**
Assistant Superindent (Jail)
Central Jail, Bhopal, Madhya Pradesh
249. **Ms. Suman**
Research Scholar
Deptt. of Political Science
Delhi University, Delhi-110007
250. **Dr. Shikha Kaushik**
Lecturer, D.A.V. College,
Budhana, Muzaffarnagar,
Uttar Pradesh
251. **Dr. Jagdish Chandra Batra**
Senior Advocate, Supreme Court of India, New Delhi-110001
252. **Dr. Samiksha Godhra**
Assistant Professor, Law Deptt.
Central University of Haryana
Mahindra Garh, Haryana
253. **Shri Vipin Kumar Singh**
Research Scholar, Law Deptt.
Allahabad University, Allahabad
254. **Dr. Pratibha Chaudhry**
House No. 181,CH Scheme 74C
Vijay Nagar, Indore-452010
255. **Ms. Chetali Solanki**
House No. 9, New Bhopal Pura
Near Padm Lighting, M.P.- 313001
256. **Dr. Hemlata Saiwal**
Associate Professor
Department of Law
Sage University, Indore
257. **Smt. Priyanka Singh**
Assistant Professor
Jay Enclave Silver Spring,
Phase-I Township, Indore-452020
258. **Dr. Hemlata Sahiwal**
2/4, Usha Nagar Main
Ring Roaf, Indore-452009
259. **Mr. Raj Kumar Kardam**
154, Vigyapan Lok Apartments
Mayur Phase-I Extension, Delhi-91
260. **Shri Chanderpal Singh**
342, Skylark Apartments
Plot No. 35, Sector 6
Dwarka, New Delhi-110075
261. **Smt. Shefali Goutam**
Paraspar Nagar Main
Annapurna Road, Indore-452009
262. **Dr Sanjeev Kumar**
C-81, Sector 30, Noida-203001
263. **Smt. Aryavarti Saroj**
Flat no. 904, Tower1
iMac Heights, Vibhuti Khand
Gomti Nagar, Lucknow-226010
264. **Dr. S.S. Dass**
Assistant Professor
Centre for Juridical.Studies
Dibrugarh University
Dibrugarh-786004, Assam
265. **Dr. Sudarshan Verma**
Professor, IRWO IIA/64,
Mansarovar Bajana Sector P
Near Transport Nagar,
Lucknow-226012
266. **Dr. Minakshi Joshi**
Banla 9, Madhura, (Khat Road)
Ramayan Nagri, Bhandara-441904
267. **Smt. Sanju Lata**
Assistant Professor
Government Law College, Palli
268. **Dr. Niti Nipun Saxena**
D-37, Sampat Hills, Rau Bypass
Indore-452016
269. **Dr. Jyoti Mishra**
162, Manvata Nagar
Kanodia Road, Indore-452016
270. **Dr. Sunita Srivastava**
3-2, Pakiza Lifestyles
Near Bypass Khajrana,
Indore-452016
271. **Dr. Alka Sharma**
C-4/201, Capital Apartments,
Vasundhra Enclave, Delhi-110096
272. **Dr. Anjana Rao**
Dean of Adminstration,
Faculty of Law, Block no. 20,
Baba Mast Nath University,
Rohtak-124021
273. **Dr. Madhu Bala**
House No. 158/1, Baba Farid Avenue,
Gurdaspur-143522, Panjab
274. **Dr. Chandra Prakash**
Assistant Professor (Sociology)
SRSD Govt. Degree College
Jainti (Almora) University Soban Sing
Jeena, Almora (Uttrakhand)
275. **Ms. Renu**
K-292, Shakur Pur
Delhi-110034

## विधि भारती परिषद् के महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

1. अनुवाद के नये परिप्रेक्ष्य, लेखक : सन्तोष खन्ना, मूल्य : 500/- रुपए
2. हिंदी और भारतीय साहित्य में महिला सरोकार, सं. : सन्तोष खन्ना, 2016, मूल्य : 450/- रुपए
3. सामाजिक-विधिक सरोकारों की संस्कृति, लेखिका : सन्तोष खन्ना, 2012, मूल्य : 77/- रुपए
4. इतिहास बनता समय, लेखिका : सन्तोष खन्ना, 2012, मूल्य : 300/- रुपए
5. 'क्या पाया? क्या खोया?' (कहानी-संग्रह), डॉ. उषा देव, मूल्य : 200/- रुपए
6. रोशनी, (उपन्यास), लेखिका : सन्तोष खन्ना, 2013, मूल्य : 410/- रुपए
7. 'संग्राम शेष है' (कहानी-संग्रह), डॉ. उषा देव, मूल्य : 250/- रुपए
8. 21वीं शती में नारी : क़ानून और सरोकार, मूल्य : 350/- रुपए
9. 'क्या मैं ग़लत थी?' (कहानी-संग्रह), डॉ. उषा देव, मूल्य : 200/- रुपए
10. 21वीं शती में मानव अधिकार : दशा और दिशा, मूल्य : 250/- रुपए
11. भारत का संविधान : अनुचिंतन के नये क्षितिज, मूल्य : 250/- रुपए (उपलब्ध नहीं है)
12. भारतीय क़ानूनों का समाजशास्त्रा, सन्तोष खन्ना, मूल्य : 500/- रुपए (विधि, न्याय मंत्रालय द्वारा पुरस्कत)
13. Dimensions of Environmental Law, Ed. Santosh Khanna, Price : 400/–Rs.
14. Reappraisal of the Constitution, Ed. Santosh Khanna, Price : 350/-Rs.
15. Human Rights Today, Ed. Santosh Khanna, Price : 500/–Rs.
16. The Consumer Protection Law and the Rights of Consumers
    Ed. Santosh Khanna, Price : 400/–Rs.
17. स्मृतियाँ (कहानी-संग्रह) लेखक : अख्तरुल हनीफ, विधि भारती परिषद्, मूल्य : 100/-रुपए
18. उपभोक्ता संरक्षण क़ानून और न्याय, मूल्य : 250/- रुपए
19. 'साक्षी' (कविता-संग्रह), सन्तोष खन्ना, मूल्य : 60/- रुपए
20. 'भावी कविता' (कविता-संग्रह), सन्तोष खन्ना, मूल्य : 120/- रुपए
21. 'संत जोन', (नाट्यानुवाद), सन्तोष खन्ना, मूल्य : 245/- रुपए
22. पर्यावरण एवं पर्यावरण संरक्षण क़ानून, सं. सन्तोष खन्ना, मूल्य : 200/- रुपए
23. 'तुम कहो तो!' (मौलिक नाटक) नाटककार : सन्तोष खन्ना, मूल्य : 125/- रुपए
24. 'कजरी' (कथा-संग्रह) लेखिका : डॉ. उषा देव, मूल्य : 175/- रुपए
25. 'द्रौपदी जि ंदा है' (कथा-संग्रह) लेखिका : डॉ. उषा देव, मूल्य : 150/- रुपए
26. 'खुशी के पल' (कथा-संग्रह) डॉ. सरस्वती बाली, मूल्य : 150/- रुपए (हिंदी अकादमी द्वारा पुरस्कत)
27. सूचना का अधिकार अधिनियम : कार्यान्वयन और चुनौतियाँ, सं. सन्तोष खन्ना, मूल्य : 250/- रुपए
28. 'अब की लड़का नहीं' (कहानी-संग्रह) लेखिका : डॉ. उषा देव, मूल्य : 250/- रुपए
29. 'आज का दुर्वासा!' (कहानी-संग्रह), लेखिका : सन्तोष खन्ना, मूल्य : 250/- रुपए
30. 'सन्धि-पत्र' (कहानी-संग्रह), लेखिका : डॉ. उषा देव, 2011, मूल्य : 300/- रुपए
31. 'भारत की संसद और सामाजिक सरोकार', सं. सन्तोष खन्ना, 2011, मूल्य : 350/- रुपए
32. 'सब सुंदर है!' (कहानी-संग्रह), लेखिका : डॉ. उषा देव, 2012, मूल्य : 300/- रुपए
33. Birbhadra Karkidholi : The Flight of a Skylark, Ed. Prof. Om Raz, 2017, 300/-
34. 'समय का सच' (कविता-संग्रह), सन्तोष खन्ना, मूल्य : 250/- रुपए
35. भारत में चुनाव, हिंदी की भूमिका और चुनाव सुधार, सं. सन्तोष खन्ना, मूल्य : 250/- रुपए
36. सेतु के आर-पार, (नाटक) नाटककार : सन्तोष खन्ना, मूल्य : 300/- रुपए
37. भारत का संविधान : नए परिप्रेक्ष्य, 2020, मूल्य : 500/- रुपए
38. भारत का संविधान, संस्कृति और क़ानून, 2021, मूल्य : 100/- रुपए

पुस्तकें मिलने का पता : **विधि भारती परिषद्**

बी.एच/48 (पूर्वी), शालीमार बाग, दिल्ली-110088

**टेलीफोन :** 011-27491549, **मोबाइल :** 9899651872, 9899651272

## सम्मान एवं पुरस्कार समारोह की कुछ झलकियाँ

डॉ. कीर्ति काले को राष्ट्र भारती सम्मान

श्री तिलकराज टक्कर को राष्ट्र भारती सम्मान

डॉ. नारायण व्यास को राष्ट्र भारती सम्मान

श्रीमती सुधा अवस्थी को राष्ट्रीय विधि भारती पुस्तक पुरस्कार

श्रीमती नम्रता शुक्ला को राष्ट्रीय विधि भारती पुस्तक पुरस्कार

डॉ. कीर्ति काले का उद्‌बोधन

## विधि भारती परिषद, 23 जुलाई, 2022, हिंदी भवन, नई दिल्ली

अंतरराष्ट्रीय काव्य संकलन 'काव्य सलिला' का लोकार्पण

विधि भारती पत्रिका अंक 111 का लोकार्पण

विधि भारती परिषद की स्मारिका का लोकार्पण

**उद्‌बोधन :** न्यायमूर्ति श्री शंभूनाथ श्रीवास्तव, श्रीमती सत्या बहिन, श्री तिलकराज टक्कर
श्रीमती सपना सुहासनी एवं प्रो. (डॉ.) मंगला रानी

**Published & Printed by Santosh Khanna On Behalf of Vidhi Bharati Parishad, BH/48, (Poorvi) Shalimar Bagh, Delhi-88, Mobile : 09899651872, 09899651272 & Printed at Archana Printers, 1/1955, Street No. 22-A, East Ram Nagar, Shahadra, Delhi-32, Mobile : 9811357243**